अखिल भारत सर्व-सेवा-संघ का साप्ताहिक मुखपत्र

भूदान-यज्ञ

भूदान यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रांति का सन्देशवाहक

सौर जेठ ३, शके १८७९ | सम्पादक : धीरेन्द्र मजूमदार
वार्षिक मूल्य ६) | एक प्रति का २ आना

वर्ष–३, अंक–३३ ✠ राजघाट, काशी ✠ शुक्रवार, २४ मई, '५७

सर्वतोभद्र ग्रामदान !

ग्रामदान परिपूर्ण वस्तु है। परिपूर्ण आसान होता है। भूदान याने कार्य का अंश है। अंश का ग्रहण करना मुश्किल हो जाता है, पर परिपूर्णता का ग्रहण आसानी से होता है। इस पर कोई आक्षेप ही नहीं आता है। वह काम चारों ओर से अनाक्षेप हो जाता है। फिर धर्म-अर्थ सब अनुकूल होते हैं। ऐसी सर्वतोभद्र अवस्था ग्रामदान की है।

(अलवाई ७–५–'५७) —विनोबा

समग्र ग्रामदान की क्रांति के रूप में

सन् सत्तावन के लिए सर्वोदय-संमेलन, कालड़ी का आवाहन

[अ० भा० सर्व-सेवा-संघ ने सर्वोदय-संमेलन के कालड़ी-अधिवेशन के लिए ता० १० मई १९५७ को जो प्रस्ताव स्वीकृत किया, वह सर्वोदय-संमेलन के सामने एक निवेदन के रूप में सर्व-सेवा-संघ के सहमंत्री श्री सिद्धराजजी ढड्ढा द्वारा पढ़ा गया और उस पर श्री जयप्रकाशजी का भाषण हुआ। —सं०]

भूदान-आरोहण में आज हम एक महत्त्वपूर्ण मुकाम पर आ पहुँचे हैं। शुरू से ही उसका लक्ष्य केवल भूमि-समस्या के हल का नहीं, बल्कि समाज-परिवर्तन की बुनियादी क्रांति का था। दुनिया एक कुटुम्ब बन कर रहे, यह आज के युग की आकांक्षा है। युग की आकांक्षा में जब विधायक पुरुषार्थ मिलता है, तब क्रांति होती है। गांधीजी ने अपने जीवन में एक ऐसी क्रांति करके दिखलायी। उन्होंने स्वतंत्रता की आकांक्षा के साथ सत्याग्रह के पुरुषार्थ को जोड़ा। उसके कारण न सिर्फ भारतवर्ष को आजादी मिली, बल्कि राजनैतिक क्षेत्र में भी अहिंसा का प्रवेश हुआ।

युगधर्म की महिमा

कठिन काम भी आसान हो जाता है, जब वह युगधर्म बन जाता है। एक-एक युग में एक-एक धर्म प्रवृत्त होता है। जैसे-जैसे युग बदलता है, वैसे-वैसे धर्म का रूप नूतन होता रहता है; क्योंकि धर्म नया-नया रूप लेता है, तो देश को नयी-नयी प्रेरणा, नयी-नयी स्फूर्ति होती है, इसलिए समाज में चैतन्य का संचार होता है। पुराने लोगों को जो चीज़ अशक्यप्राय मालूम होती थी, वही इस जमाने में शक्य मालूम होती है, क्योंकि वह युगधर्म के अनुकूल होती है।

—विनोबा

गांधीजी के इस क्रांतिकारी कार्य का अगला चरण भूदान-यज्ञ के रूप में हम सबके सामने आया। भूदान-यज्ञ के जरिये अहिंसा ने आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में प्रवेश पाया और भ्रातृत्व की मानवीय आकांक्षा एक नये पुरुषार्थ के साथ जुड़ गयी। मानव के प्रति मानव की करुणा के प्रत्यक्ष व्यवहार से श्री विनोबाजी ने देश की बुनियादी समस्या को एक अनोखे ढंग से हल करने का कदम उठाया। जब पड़ोसी भूखा हो, तो हम कैसे खा सकते हैं, इस भावना से लोगों ने भूदान देना शुरू किया। एक वर्ष के बाद सर्व-सेवा-संघ ने विनोबाजी के मार्गदर्शन में इस काम को देश भर में फलाने की जिम्मेदारी उठायी। देश के पाँच लाख गाँवों में कम-से-कम एक-एक भूमिहीन परिवार को जमीन मिले, इस दृष्टि से दो वर्ष में पचीस लाख एकड़ भूमि इकट्ठी करने का संकल्प किया गया। इस संकल्प की कालावधि पूरी होने से पहले ही भारत की जनता ने उससे अधिक जमीन दे दी। साथ-ही-साथ भूदान-यज्ञ का क्षितिज भी व्यापक हो गया। इस अहिंसात्मक प्रक्रिया के जरिये देश में भूमिहीनता मिटाने का लक्ष्य भूदान-कार्यकर्ताओं के सामने स्पष्ट हो गया और देश के एक करोड़ भूमिहीन परिवारों को खेती लायक जमीन मिले, इस दृष्टि से पाँच करोड़ एकड़ भूमि प्राप्त करने का लक्ष्यांक स्थिर किया गया। इस संकल्प की पूर्ति होने से पहले ही भूदान-आरोहण ऐसी मंजिल पर पहुँचा, जिसके कारण इस आंदोलन की क्रांतिकारी शक्यताएँ स्पष्ट हो गयी। देश के ढाई हजार गाँवों के लोगों ने प्रेमपूर्वक, स्वेच्छा से अपनी जमीन की व्यक्तिगत मालिकी मिटा कर ग्रामदान किया। स्पष्ट है कि ग्रामदान की फलश्रुति के बाद पाँच करोड़ एकड़ जमीन इकट्ठी करने का संकल्प अब देश की तमाम जमीन पर से व्यक्तिगत मालिकी के विसर्जन के लक्ष्य में स्वाभाविक ही समा जाता है।

अतः हमें अपनी सारी ताकत अब ग्रामदान के काम में लगानी है। सन् '५७ का वर्ष भारत के इतिहास में एक अनोखा महत्त्व रखता है। इस वर्ष में भारत के जीवन को नया पल्टा देने वाला बड़ा परिवर्तन होगा, ऐसी आकांक्षा भारतीय जनता के हृदय में उठी है। यह आकांक्षा गांधीजी की कल्पना के ग्रामराज की स्थापना से ही पूरी हो सकती है और ग्रामदान में ही ग्रामराज के इस आदर्श को मूर्त रूप देने की ताकत है। इसलिए हम सबको ग्रामदान-आन्दोलन को अग्रसर करने में ही अपनी शक्ति लगा देनी चाहिए। आज ग्रामदान के विचार ने एक ठोस रूप ले लिया है और देश के तमाम राजनैतिक पक्षों तथा विचारकों ने इस विचार का स्वागत किया है।

समझाने भर की देर है

कन्याकुमारी में हमने प्रतिज्ञा ली थी कि जब तक भारत में ग्रामराज की स्थापना नहीं होगी, तब तक हम चैन नहीं लेंगे। प्रतिज्ञा लेने के बाद हमारा कुल भार हट गया। इसका कारण यही युगधर्म है। एक बाजू धर्म-संस्था और दूसरी बाजू साम्यवादी कह रहे हैं कि ग्रामदान होना चाहिए। दो विचारों के बिलकुल दो सिरे हैं। दो सिरे जहाँ इकट्ठे होते हैं, वहाँ समझना चाहिए कि हवा तैयार है, लोगों के पास पहुँचने में जितनी देर लगेगी, उतनी ही देर बाकी है। बस, प्रेम से समझाना है। —विनोबा

तीसरे महायुद्ध के द्वार पर खड़ी हुई दुनिया को प्रेम-मंत्र देने का एक अत्यन्त व्यवहार्य कार्यक्रम आज भूदान, ग्रामदान-आंदोलन के रूप में भारत के सामने है। जब तक भारत में ग्रामराज की स्थापना न हो, तब तक अखंड घूमते रहने की श्री विनोबाजी ने प्रतिज्ञा की है। देश की तमाम ताकत यदि ग्रामदान के आंदोलन को सफल करने में लग जाती है, तो सन् '५७ के ऐतिहासिक वर्ष में ही इस महान् क्रांति का संपन्न होना संभव है। परिस्थिति में जो त्वरा की आकांक्षा है, उसका अनुभव करते हुए हम भारत की जनता से, सारे राजनैतिक पक्षों और विशेष कर रचनात्मक कार्यकर्ताओं से अपनी सारी शक्ति ग्रामदान-आन्दोलन को सफल बनाने में लगाने की अपील करते हैं।

◆ ◆ ◆

www.vinoba.in

लोकतंत्र में सत्याग्रह का स्थान

(विनोबा)

सत्याग्रह की मीमांसा मैं यहाँ नहीं करना चाहता हूँ, परंतु उसका थोड़ा-सा दिग्दर्शन कराना उचित होगा और न कराना अनुचित। "सत्याग्रह" शब्द के उच्चारण से ही सबको आकर्षण होना चाहिए। पर होता है, उसके बदले विकर्षण! मान लीजिये कि किसीका उपवास शुरू हुआ। तब मेरे मन में भी सहानुभूति का उदय होने के बदले, प्रथम क्षण कुछ ऐसा भास होता है कि इस व्यक्ति ने कुछ गलत काम किया! ऐसा नहीं लगना चाहिए, परंतु ऐसा होता है। फिर अधिक परिचय के बाद अगर वह उपवास योग्य मालूम हुआ, तो हम वैसा कहते भी हैं, लेकिन प्रथम क्षण मेरे मन पर भी वैसी प्रतिक्रिया होती है। जब मेरे मन पर भी ऐसी प्रतिक्रिया होती है, तो दूसरे लोगों के मन पर, जो कि समाज की व्यवस्था को जरा भी धक्का न लगे, ऐसा चाहते हैं होगी ही। जो ऐड्मिनिस्ट्रेटर्स (कारोबारी) होते हैं, वे 'लॉ ऐण्ड आर्डर' को प्रथम चीज मानते हैं। याने सब गुण उसके बाद आते हैं। वे ऐसा इसलिए सोचते हैं कि लॉ ऐण्ड आर्डर के बिना उनका काम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता। इसलिए जिन पर 'ऐडमिनिस्ट्रेशन' की जिम्मेवारी है, उनके चित्त पर स्वाभाविक ही उस उपवास की विपरीत प्रतिक्रिया होती हो तो आश्चर्य नहीं।

सत्याग्रह का अर्थ

सत्याग्रह में एक शक्ति है, ऐसा हम मानते हैं। उस शक्ति का स्वरूप यह है कि वह सामनें वाले के बैर को डिसआर्म (निःशस्त्र) करती है। जैसें सूर्य के आने से अन्धकार मिट जाता है, वैसे सत्याग्रह में यह शक्ति है कि जो सामने वाला मनुष्य सोचने के लिए भी राजी नहीं था या विपरीत ही सोचता था, वह सत्याग्रह के दर्शन से सोचने लगा और उसका सोचना बिलकुल निर्मल हुआ। उसकें बुद्धि की पर्दे खुल गये, मोह के आवरण दूर हो गये और उसके मन में अनुकूलता पैदा हो गयी। जहाँ यह होता हैं, वहाँ सत्याग्रह हैं। जहाँ यह नहीं होता और किसी-न-किसी प्रकार का दबाव आता है, वहाँ सत्याग्रह-शक्ति क्षीण हो जाती हैं। अभी आपने मेरे मुँह से सुना* कि ग्रामदान में थोड़ा-सा कोअर्शन का अंश आ जाय, तो भी डिफेन्स मेजर के तौर पर मैं उसे मान्य करने को राजी हूँ। लेकिन जहाँ सत्याग्रह का सवाल आता है, वहाँ लोगों के पास जाकर ग्रामदान की बात समझानी होती हैं। इस सत्याग्रह-विचार में "कोअर्शन" का यत्किंचित् भी अंश हम सहन नहीं कर सकते हैं, बल्कि उसमें जितना दबाव का अंश रहेगा, उतना उसका बल क्षीण होगा। मैं आपको एक मिसाल दे रहा हूँ, जो बहुत बड़ी हैं और जिसके बारे में बापू के साथ मेरी कई बार चर्चा भी हुई है। बापू ने कम्यूनल अवार्ड के लिए उपवास किये थे। उस समय अम्बेडकर के साथ कुछ चर्चा चल रही थी। सब चाहते थे कि उपवास जल्दी समाप्त हो। रवीन्द्रनाथ ठाकुर उस समय वहाँ आ पहुँचे। बापू के उपवास का वेजा दबाव रवीन्द्रनाथ पर पड़ा और उन्होंने उस अवार्ड को मन से पसंद न करते हुए भी मान्यता दी, ऐसा बाद में जो घटना हुई, उस पर से कहना पड़ता है—क्योंकि उसके बाद वे दुखी हुए और उन्हें लगा कि इससे बंगाल का नुकसान हुआ। उस घटना की तफसील में मैं नहीं जाना चाहता और वास्तव में नुकसान हुआ या नहीं, इसकी भी चर्चा नहीं करना चाहता। परंतु उस उपवास का परिणाम दबाव के रूप में रवीन्द्र ठाकुर जैसे महान् व्यक्ति पर भी हुआ, तो समझना चाहिए कि उस सत्याग्रह में न्यूनता रह गयी। आप कहेंगे कि 'यह शख्स बता रहा है कि बापू के सत्याग्रह में जब न्यूनता रह गयी, तो हमसे यह आशा करता है परिपूर्णता की। यह तो अजीब बात है! याने इधर अपूर्णता की मिसाल देते हुए इसने गांधीजी की अपूर्णता बतायी और उधर हमारे जैसे सामान्य मानवों से कहता है कि तुम्हारे सब सत्याग्रहों में अपूर्णता नहीं आनी चाहिए।' हमारे कुछ मित्र हमसे कहते हैं कि 'इस तरह की आपकी अपेक्षा कभी सफल नहीं हो सकती हैं। आप हमारे सत्याग्रह को चाहे निगेटिव कहिये, चाहे पैसिव रेजिझटेन्स कहिये, चाहे एक प्रकार का दबाव कहिये, चाहे अपूर्ण कहिये, परंतु हमारी जो योग्यता हैं, उसको देखते हुए हम आपके ही मुख से यह सुनना चाहते हैं कि हम जो करते हैं, वह ठीक है। याने हम अपना बचाव आपके ही मुख से सुनना चाहते हैं।' हम उन्हें जवाब देते हैं कि अब जमाना बदल गया है। जब घनघोर निशा टूटने का आरंभ होता है, तो सूर्य भी सौम्य होता है, याने उसका रूप भी प्रखर नहीं होता है, उसका तेज कम होता है, वह चंद्रवत् फीका दीखता है। यहाँ पर सौम्य शब्द का मैं दूसरे अर्थ में प्रयोग कर रहा हूँ। लेकिन जमाना जरा बदल जाय, तो वही सूर्य प्रखर-रूप में दिखायी देता है।

*देखें "प्लैनिंग का आधार ग्रामदान ही हो सकता है", शीर्षक भाषण, पृष्ठ-संख्या ७ पर।

गांधीजी का जमाना

गांधीजी के जमाने में सत्याग्रह रूपी सूर्य का उदय हुआ था। वह बिलकुल फीका-सा था। अब जमाना बदल गया है, लोकसत्ता आयी है। अब स्वाभाविक ही सवाल पैदा होता है कि क्या लोकसत्ता में सत्याग्रह के लिए गुंजाइश है? यह टालने जैसा सवाल नहीं है।

सोचने की बात है कि जहाँ आपको पूरी आजादी है कि घर-घर जाकर जो भी विचार समझाना है, समझायें, उस हालत में क्या सत्याग्रह के लिए गुंजाइश है? कुछ लोग मानते हैं कि गुंजाइश नहीं है, कुछ मानते हैं कि कम है। इस तरह मानने वालों का एक बड़ा समूह मौजूद है। पहले वे ऐसा नहीं मान सकते थे, लेकिन अब मान सकते हैं, क्योंकि परिस्थिति बदली है, देश आजाद हुआ है, लोकसत्ता आयी है, प्रचार के साधन खुल गये हैं। इस हालत में कोई उसी प्रकार का निगेटिव सत्याग्रह करे, तो हम उसका यों कह कर बचाव नहीं करेंगे कि हम छोटे लोग हैं और गांधीजी के भी सत्याग्रह में न्यूनता थी, तो हमारे जैसे छोटे लोगों के सत्याग्रह में तो वह रहेगी ही!

जमाने की कीमिया

हम तो कहना चाहते हैं कि हमारे जमाने का छोटा सत्याग्रह भी गांधीजी के जमानें के सत्याग्रह से बड़ा है। याने जमाने ने उसको बड़ा बना दिया है, ऊँचा खड़ा कर दिया है। आज आजादी, मत-प्रचार की सहूलियत आदि जो पृष्ठभूमि बनी है, वह गांधीजी के जमाने में बिलकुल ही नहीं थी, इसलिए यद्यपि गांधीजी उस जमानें के सर्वोत्तम सत्याग्रही थें, तो भी उनके सत्याग्रह को ऐसी उपाधि का ग्रहण, ग्रास हुआ कि उसके कारण अत्यन्त प्रखर तेज भी फीका दीखने लगा। इसलिए हम छोटे हैं, यों कह कर अपना बचाव नहीं कर सकते हैं। आप छोटे हैं, परंतु आपकी विरासत बड़ी है। इसलिए इस दृष्टि से आपकी जिम्मेवारी बढ़ जाती हैं।

सत्याग्रह के संशोधन की दृष्टि से सोचते हुए हम यह नहीं कह सकते कि हमारी दुर्बलता के परिमाण में हमारा सत्याग्रह ठीक हैं। आप दुर्बल हैं, तो आपको सत्याग्रह का हक नहीं है। आज की परिस्थिति में आप सत्याग्रह का स्वीकार करना चाहते हैं, तो आज "सत्याग्रही" पर और सत्याग्रह पर भी यह जिम्मेवारी है कि वह लोगों में अपने उच्चारण से भी भय न निर्माण करे, अभय का ही निर्माण करे। अगर मैंने कहा कि "कल से मैं सत्याग्रह करूँगा," तो इतना कहने मात्र से ही आप लोगों के मन में जो सहानुभूति थी, वह सहस्रगुना बढ़नी चाहिए और मेरे लिए जो विरोध था, वह कम होना चाहिए। ऐसा नतीजा 'सत्याग्रह' शब्द के श्रवण मात्र से होना चाहिए। फिर आगे उसकी कृति से और भी परिणाम आने चाहिए। इस तरह 'सत्याग्रह' शब्द का श्रवण बहुत ही सुन्दर होना चाहिए। जैसें किसीने किसीसे प्रेम किया या करुणा दिखायी, तो करुणा, प्रेम और दया का कार्य हुआ, ऐसा हम सुनते हैं। तो सुनने से ही कर्णों को अमृत-रस स्वादन का आनन्द होता है। फिर उसकी योग्यता कितनी थी, आदि बातों का मूल्यमापन पीछे होता हैं। जैसे खून हुआ, यह सुन कर किसीके भी कानों को अच्छा नहीं लगता है, सुनते ही अरुचि पैदा होती हैं, फिर चाहे बाद में उस पर सोचा जाता हो कि उसका बचाव हो सकता हैं या नहीं, उसके पीछे क्या हेतु होगा, आदि। कुछ लोग बचाव करते हैं, कुछ नहीं करते हैं। इस तरह मतभेद बाद में आता है। परन्तु प्रथम श्रवण में सबका मतैक्य है कि खराब बात हुई। वैसे ही जब प्रेम-कार्य होता है, तो प्रथम श्रवण में सबको लगता है कि अच्छी बात हुई। उसी तरह 'सत्याग्रह' शब्द के प्रथम श्रवण से सारी दुनिया के मन पर अच्छा असर होना चाहिए। यह शक्ति जिस सत्याग्रह में हैं, उसीको सत्याग्रह कहा जाता

www.vinoba.in

है। और वही सत्याग्रह डेमाक्रेसी में चलेगा। सत्याग्रह का जो पुराना रूप था, उसके लिए डेमाक्रेसी में गुंजाइश नहीं है। परिस्थिति के कारण इतना फर्क हुआ है।

सौम्य,सौम्यतर, सौम्यतम, यह एक दिशा-सूचक बात मैंने सत्याग्रह के विषय में बतायी थी। आज और एक बात बतायी। तीसरी बात है, लोकनीति और राजनीति के बारे में। थोड़े में सार यह है कि गांधीजी ने राजनीति चलायी, ऐसा जो लोग समझते हैं,उन्होंने गांधीजी को समझा ही नहीं है। गांधीजी ने जितना और जो कुछ किया, वह कुल-की-कुल सौ फीसदी लोकनीति थी, ऐसा हम मानते हैं। कइयों को भास होता है कि गांधीजी की पकड़ राजनीति पर थी। परन्तु वस्तुस्थिति ऐसी है कि उनकी पकड़ लोकनीति पर थी। उनके यच्चयावत, कुल-के-कुल काम-राउन्ड टेबल कान्फरेन्स में जाकर हिस्सा लेने के काम से लेकर सत्याग्रह चलाने तक के और राजनैतिक क्षेत्र में उन्होंने जो काम किये, वे सब काम-लोकनीति की स्थापना के लिए और लोकनीति को समझ कर ही किये गये थे! इधर स्वराज्य मिल गया और उधर उनकी नोआखाली में यात्रा चली। एक ही दिन हमने ये दो दृश्य देखे! स्वराज्य मिला था, उसे न लेने की बात तो नहीं थी! सत्ता की आसक्ति से गलतियाँ होंगी, पर 'पावर करप्ट्स' कह कर उसे न लेने की बात तो नहीं थी। उसे लेना ही था।

परंतु बापू स्वयं नोआखाली में थे। उन्होंने अपना स्थान पहचान लिया था। इसमें रहस्य है। उनके कुल जीवन का वह परिपाक है। उनका स्वाभाविक जीवन ही उस तरफ जा रहा था। दिल्ली की तरफ नहीं जा रहा था। दिल्ली में जो चीज बनी, वह उनके कारखाने का एक "बाय प्राडक्ट" था। उनके कार्य का जो मुख्य स्वरूप था, उसका दिग्दर्शन नोआखाली में हुआ और यथाक्रम वे वहाँ पहुँच गये। उस गुलामी के जमाने में, दुखी जनता को गुलामी से छुड़ाने के लिए उन्होंने जो काम किया, उससे आभास होता था कि वह सत्ता-प्राप्ति का कार्य था। परंतु वह कार्य सत्ता-प्राप्ति का नहीं था, सत्य-शोधन का था, लोकनीति की स्थापना का था। ऐसा अगर नहीं होता, तो वे काँग्रेस को लोकसेवक-संघ बनाने की सलाह न देते।

राजनीति थोड़ी-सी जानने वाला एक सामान्य मनुष्य भी जानता है कि वह अजीब सलाह थी। कोई भी समझ सकता था कि लोक-सेवक-संघ बनने से सारी शक्तियाँ तितर-बितर होंगी। क्या बनेगा, कुछ कह नहीं सकते हैं, प्रतिगामी शक्तियाँ जोर कर सकती हैं, दिल्ली पर किसका कब्जा रहेगा, पता नहीं। इसलिए एक साधारण मनुष्य भी जो चीज समझ सकता था, उतनी भी समझ क्या गांधीजी में नहीं थी?

समझने की बात है कि उनका सोचने का ढंग, जीवन का ढंग बिलकुल दूसरा था और वह था लोकनीति का।

(लोकसेवक-शिविर, सर्वोदयनगर, कालड़ी, ता० १२-५ के भाषण का अंतिम अंश)

सर्वोदय-सम्मेलन के अध्यक्ष का भाषण : कालड़ी, ता० १०-५-'५७

भूदान-यज्ञ का अवतार-कार्य

(दादा धर्माधिकारी)

जो चीज आपके सामने मुझे रखनी है, वह इस देश के एक साधारण नागरिक के नाते रखनी है। आज की जो परिस्थिति है, वह इस देश के साधारण नागरिक से अब सही नहीं जाती। चाहे जिस तरीके से, चाहे जिस तरकीब से अगर इससे छुटकारा मिलता है, तो वह उसे चाहिए। इसी भूमिका से मेरे अपने मन में भी न तो हिंसा का आग्रह है, न अहिंसा का। न सत्ता का आग्रह है, न सेवा का। समाज में जो विषमता, है उसे चाहे जिस तरह से मिटाने के हक में इस देश के लोग भी हैं और मैं भी हूँ। लेकिन इतनी तमीज अब तक मेरे मन में बाकी रह गयी है कि मैं सोचता हूँ कि क्या दरअसल, जिस तरीके को हम अख्तियार करते हैं, उससे हमें इस परिस्थिति से छुटकारा मिलेगा? बहुत सोच-विचार के बाद मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि हिंसा, जोर-जबरदस्ती के तरीके से गरीब आदमी आजाद नहीं हो सकता। मैं सोच-समझ कर 'आजाद' कह रहा हूँ। 'सुखी' नहीं कह रहा हूँ। एक तरफ से लोग कहते हैं, हम इंसान को सुखी बनाना चाहते हैं। दूसरी तरफ से कह रहे हैं, हम इंसान को आजाद रखना चाहते हैं। जो आजादी के हिमायती हैं, उन्होंने इंसान को अपने आपको बेचने की ही आजादी दी है और किसी किस्म की आजादी आज उसके लिए नहीं रही है। जो उसे सुखी बनाने की कोशिश में हैं, वे उससे कहते हैं, तुम अपनी आजादी दे दोगे, तो सुखी बनोगे। सवाल हमारे सामने बहुत साफ है। हम इंसान को आजाद और सुखी बनाना चाहते हैं। इस दृष्टि से आप भूदान-यज्ञ और ग्रामदान का विचार करें।

सन् १८५७ का सबक

आज का यह १० मई का दिन है। इस देश में कुछ व्यक्तियों ने आज के दिन आजादी के लिए जान कुर्बान कर दी। वे असफल रहे। मैंने उनके इतिहास से जो सीखा है, वह यह कि असफलता अलग चीज है और पराजय अलग चीज है। जो असफल होता है, वह पराजित नहीं होता। असफलता से उसका कदम आगे पड़ता है। क्रान्तिकारी का अपना एक देखने का तरीका होता है। भगवान् ने अर्जुन से कहा कि इन आँखों से तू विश्व-रूप नहीं देख सकेगा, इसके लिए दूसरी आँख की जरूरत है। गांधीजी की नमक की पुड़िया को हमने इन आँखों से देखने की कोशिश की। मुझे तो लगने लगा कि एक समय जितना नमक हम भोजन में खाते हैं, उतना भी वह नहीं बना सके। मुझे क्या मालूम कि उस जरा से नमक में भी इस देश की आजादी छिपी थी। जब यह आंदोलन शुरू हुआ, जितनी सम्भावनाएँ उसमें थीं,उनका दर्शन उस वक्त नहीं हो सकता था। अब उसमें से जब ग्रामदान की बात आयी, तो लोग कहने लगे कि इसमें सब कुछ है। सारा का सारा अगर जलमय होता है, तो फिर छोटे-छोटे जलाशयों की जरूरत नहीं रहती। भूदान, सम्पत्तिदान, श्रमदान, बुद्धिदान का समुच्चय ग्रामदान नहीं है, वह उनका विकसित रूप है। भूदान, सम्पत्तिदान, बुद्धिदान के जोड़ से ग्रामदान नहीं बना है। उन सबका समावेश ग्रामदान में है। इसका सम्बन्ध हमारी राष्ट्रीय समस्या से है, अन्तर्राष्ट्रीय समस्या से है और इन समस्याओं के हल करने के साधन से भी है। थोड़े ही दिन पहले अमेरिका के अध्यक्ष आइसनहावर ने घोषित किया कि अब निःशस्त्रीकरण केवल वांछनीय नहीं, संम्भवनीय नहीं, बल्कि अनिवार्य हो गया है। दूसरी तरफ से रूस ने घोषित किया कि हम क्या करें? हम तो निःशस्त्रीकरण के लिए कब से तैयार बैठे हैं, लेकिन अमेरिका वैसा नहीं करता है, इसलिए हम भी कुछ नहीं कर पाते हैं। अरमान शान्ति के हैं, जरूरत भी शान्ति की है; लेकिन प्रेरणा शान्ति की नहीं है। नतीजा यह है कि अब तक एटम बम, हाइड्रोजन बम और कोबाल्ट बम ही थे, अब तो पीस ब्रैंड बम भी बन रहे हैं। एक मई के दिन रूस में जो समारोह हुआ, उसमें दो तरह के दृश्य दिखाई दिये। एक तो बिलकुल अपटुडेट, (अद्यतन), अणु-अस्त्र का प्रयोग रूस कर सकता है इसकी कुछ झाँकी दिखायी गयी। दूसरे जितने गुब्बारे वहाँ पर उड़ाये गये, उन पर 'शान्ति, शान्ति' लिखा था। आज जिस वीर-वृत्ति की आवश्यकता है, वह वीर-वृत्ति निःशस्त्रीकरण की है। आज निःशस्त्रीकरण की भाषा केवल जवाहरलाल और विनोबा नहीं बोल रहे हैं। आज आप देख रहे हैं कि दुनिया में निःशस्त्रीकरण की भाषा बुल्गानिन, आइसनहावर और इंग्लैंड के प्रधान मंत्री बोल रहे हैं। १९५६ की सितम्बर में चीन में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की आठवीं कांग्रेस, ११ साल बाद हुई। उसका उद्घाटन जब माओ ने किया, तो कहा कि समाजवादी देश और सारी दुनिया की जनता शान्ति चाहती है। जयप्रकाश बाबू ने सबेरे आप से कहा कि यह एक ऐसा कार्यक्रम है कि उनके पुराने साथी शंकरन नंबुद्रीपाद और जयप्रकाश बाबू का सहयोग हो सकता है। समस्त दुनिया को निःशस्त्रीकरण की हिम्मत की जरूरत है। याने, शस्त्र चलाने के लिए जो युद्ध-कुशलता आवश्यक थी, उसमें अलग प्रकार की कुशलता की आवश्यकता आज की दुनिया में है। कल तक शान्ति की आकांक्षा थी, आज आकांक्षा आवश्यकता में बदल गयी है। फिर भी शान्ति का कदम उठाने की हिम्मत नहीं है। ऐसी शोचनीय अवस्था में आज का मानव है।

www.vinoba.in

प्रश्न साधननिष्ठा का है

यह साहस पैदा करने की शक्ति कौनसे विज्ञान में है ? वैज्ञानिक ढंग से यह समस्या हल नहीं हो सकती; क्योंकि आज के सारे वैज्ञानिक सत्ताधीशों के पलंग के पायों के नीचे दबे हैं। अणु-अस्त्रों के विनाशकारी, विध्वंसक प्रयोग दुनिया के भिन्न-भिन्न कोने में होते हैं और दुनिया के सारे-के-सारे वैज्ञानिक असहाय होकर देखते हैं। ऐसी दयनीय परिस्थिति है।

समस्या का हल विज्ञान की सामर्थ्य से बाहर है। जर्मनी को रूस ने धमकाया कि देखो, तुमने अगर ज्यादा शरारत की तो जर्मनी का एटम बम से विध्वंस हो सकता है। अमेरिका से राजाजी कहते हैं कि कम-से-कम तुम तो अपने प्रयोग बन्द करो ! तो वे कहते हैं कि अब तक रूस ने बन्द नहीं किये। यह वीर-वृत्ति नहीं है, यह नग्न आतंकवाद है।

आज रूस, अमेरिका और इंग्लैंड में आतंकवाद की प्रतियोगिता हो रही है। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति में अब ऐसे व्यक्ति की और ऐसे देश की आवश्यकता है, जो दृढ़ता के साथ और हिम्मत के साथ निःशस्त्रीकरण कर सके, शस्त्र के बिना समस्या हल करने का तरीका जिसे मालूम है। हम सब अपने-अपने दिल को टटोलें और पूछें कि क्या यह कहने की हिम्मत हममें है ? यह प्रश्न साधन-निष्ठा का है। इसे मैंने साधन-निष्ठा कहा है।

भाषावार प्रान्तों के आंदोलन में हमने क्या देखा ? एक राज्य के मुख्य मंत्री एक तरफ हो गये और दूसरे राज्य के मुख्य मंत्री दूसरी तरफ–दोनों हैं एक ही पार्टी के। मन्दिर में पुजारियों का, पनघट पर स्त्रियों का, परीक्षा के हॉल में विद्यार्थी और शिक्षकों का झगड़ा हो; तो ढेलेबाजी और पत्थरबाजी ही हमारे साधन होते हैं ! दुनिया भर में शान्ति की उपयोगिता बताने के लिए गांधी, बुद्ध और अशोक का नाम लेकर हम गाते हैं। लेकिन आये दिन ढेलेबाजी और पत्थरबाजी करते हैं। इस प्रकार के लोग निःशस्त्रीकरण की बात कहें, तो उसका प्रभाव कैसे पड़ेगा ? क्या वे सच्चे दिल से शान्ति का प्रतिपादन कर सकते हैं ?

आज ढेबरभाई ने बड़े गौरव के साथ कहा कि हमारे देश में विनोबा हैं और जवाहरलालजी हैं। वे अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में शान्ति का उद्घोष करते हैं, राष्ट्रीय क्षेत्र में अहिंसा का पुण्याहवाचन करते हैं। मैं ढेबरभाई की बात में एक बात और जोड़ता हूँ। अगर इस देश में जवाहरलाल हैं और विनोबा हैं, तो दादा धर्माधिकारी जैसे नागरिक भी हैं। ये नागरिक पुलिस की गोलियों के शिकार होते हैं या उत्तेजित भीड़ के ढेले और पत्थर खाते हैं ! यह एक गम्भीर समस्या है। यह लोकशाही की और नागरिक चारित्र्य की समस्या है। मैंने भूदान-आंदोलन को लोकशाही का, अहिंसात्मक समाज-रचना का और नागरिक के चारित्र्य का वाहन माना है। इसलिए मैं उसकी तरफ परिणाम की दृष्टि से नहीं देखता, आकार की दृष्टि से भी नहीं, गुणात्मक दृष्टि से देखता हूँ। गांधीजी के आंदोलन की तरफ मैंने इसी दृष्टि से देखा था। हम स्वार्थी, डरपोक और मक्कार थे। फिर भी गांधी ने ऐसा साधन हमारे हाथ में दिया कि अंग्रेजों के दिल में हमारी हिम्मत की और ईमानदारी की धाक जम गयी। इस भूदान-यज्ञ ने, हमें एक ऐसा साधन दिया है, जो हमें ऊपर उठा सकता है। यह उसकी गुणात्मकता का लक्षण है।

साध्य-साधन का अभेद

अगर १९५७ की तरह आपने एक मुहूर्त की दृष्टि से इसे देखा है और यह अर्थ माना है कि '५७ में कुछ करना है, तो आपको यह भी मानना चाहिए कि '५५ में भी कुछ हो सकता था, '५४ में भी कुछ हो सकता था। अर्थात् हमें वर्तमान समय को ही सबसे बड़ा मुहूर्त मानना है। वर्तमान समय विभूति होकर हमारे जीवन में आयेगा। १९५७ का अर्थ यह है कि जो करना है, वह तुरन्त करना है। तुरन्त करना है, आज करना है और शुद्ध साधन से करना है। सही रास्ते से मतलब उस रास्ते से है, जिससे हम सहज मुकाम पर पहुँच सकते हैं। हम जिस साधन को स्वीकार करते हैं, उसके बारे में हमारे मन में यह निश्चय होना चाहिए कि हम जहाँ पहुँचना चाहते हैं, वहाँ जाने के लिए दूसरा रास्ता नहीं है। हिंसा-अहिंसा का विचार, गांधी-मार्क्स का विचार, इस दृष्टि से उतना महत्त्व नहीं रखता, जितना यह विचार कि हमारा साधन हमारे साध्य के अनुकूल हो। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अमेरिका और रूस दोनों में से कोई भी निःशस्त्रीकरण की हिम्मत नहीं दिखा रहा है। राष्ट्रीय क्षेत्र में पुलिस की गोली और गुंडों के डंडों के बीच नागरिकता सत्त्वहीन हो गयी है। यह समस्या है। शस्त्र, सत्ता या विज्ञान से इनमें से किसी भी समस्या का समाधान नहीं हो सकता। यह कोरे तत्त्वज्ञान की बात नहीं है—प्रत्यक्ष व्यवहार का प्रश्न है।

भूदान-यज्ञ का अवतार-कार्य

जब दो भाषा-भाषियों के बीच कोई मसला पेश होता है, तो एक भाषा-भाषी दूसरी भाषा-भाषी पुलिस तक का भरोसा नहीं कर सकते ! यह अविश्वास फौज तक चला जाय, तो हमारा भारतवर्ष कहाँ रहेगा ? ऐसी परिस्थिति में अलग-अलग भाषा बोलने वालों को भूदान-यज्ञ एक-दूसरे-के साथ मिला रहा है ! छोटे-से-छोटा भूदान-कार्यकर्ता भी सारे प्रांतों में जाकर अपनी बात रखता है और लोग उसकी बात से प्रभावित होते हैं।

धरती के गर्भ से वेदों का उद्धार करने के लिए भगवान् ने शूकर का रूप लिया। भारत की नागरिकता की खोज करने के लिए विनोबा का यह भू-दान-यज्ञ अवतीर्ण हो गया। मेरा अपना अनुभव यही है। हमारे अदने-से-अदने साथियों का, लड़के-लड़कियों और बहुतों का भी अनुभव यही है। पंढरपुर के विठोबा को, खड़े रहने के लिए एक ईंट मिली थी। भारतमाता को किसी ईंट की जरूरत थी, वह इस भू-दान-यज्ञ के आन्दोलन से उसे मिली है।*

* प्रथमांश —सं०

शांति और क्रांति का समन्वयकारी सर्वोदय

(विनोबा)

ग्रामदान जितनी बड़ी घटना है, उससे भी बड़ी घटना यह है कि सबको यह उपाय जँच रहा है। सद्विचार जितना महत्त्व का होता है, उससे भी ज्यादा महत्त्व की वह चीज है, जब वह सबको जँचती है। ग्रामदान का विचार सद्विचार है, और वह सर्व-सम्मत भी है। इस हालत में हमारे दूसरे जो कुछ भिन्न-भिन्न मत हों, उन्हें जरा बाजू में रख कर सब इसमें लगेंगे, तो विश्व-शांति की राह खुल जायगी, इसमें कोई शक नहीं है। तमिलनाड़ की बात है। वहाँ कुछ कार्यकर्ताओं ने चर्चा चलायी कि बाबा वहाँ जायगा, तो इसे क्या सहयोग मिलेगा ? शायद विरोध ही होगा। कुछ कहने लगे कि संभव है, बाबा को केरल ही दान में मिलेगा ! उस पर मैंने कहा, "दूसरा ही संभव होगा !" और मैं मानता हूँ कि केरल का दान ही केरल में मिलना चाहिए। उसके बिना कम्युनिस्टों को जो मौका मिला है, वह उन्होंने खोया, ऐसा होगा।

कम्युनिस्टों से

कुछ लोगों का खयाल है कि कम्युनिस्ट ध्वंसवादी हैं, उनके और हमारे विचारों में कई जगह मतभेद हैं। उनसे हमने कई बार कहा कि यह ठीक विचार है, परंतु कम्युनिज्म स्वयं ध्वंसवादी है, ऐसा हम नहीं समझते हैं। स्वयं अपने-आप में कम्युनिज्म एक विचारणीय वस्तु है। एक बहुत बड़ी बात कम्युनिज्म में है, जो इसके पहले के विचार में नहीं थी। मैं विश्लेषण नहीं करूँगा, परंतु कम्युनिज्म पर टीका करने वाली छोटी-सी 'वृत्ति' मैंने लिखी है। उसमें मार्क्स का उल्लेख करते हुए, उसे महामुनि मार्क्स मैंने कहा है। महामुनि मार्क्स का ग्रंथ पढ़ कर असंख्य लोगों का हृदय-परिवर्तन हुआ। लेकिन आश्चर्य की बात यह है कि कम्युनिस्ट हृदय-परिवर्तन पर विश्वास नहीं करते ! वहीं हमारा उनसे मतभेद है। हम उनसे कहते हैं कि भाई, आप स्वयं ही हृदय-परिवर्तन की मिसाल हैं, फिर भी हृदय-परिवर्तन नहीं होता है, ऐसा आप क्यों कहते हैं ? इसलिए हम समझते हैं कि कम्युनिज्म स्वयं एक बहुत अच्छी चीज है। अब इसके लिए साधन क्या है ?

पुराणकार, कम्युनिस्ट और सर्वोदयी

इस बात में किसी कम्युनिस्ट को भी शंका नहीं है कि मानव का हृदय अशुद्ध नहीं है। कोई बुद्धिपूर्वक विरोध नहीं करता, स्नेहपूर्वक विरोध करता है, क्योंकि विशिष्ट घटना होने के बाद स्टेट खतम होगी, ऐसा

www.vinoba.in

वे मानते हैं। जो इस तरह मानता है, उसका मानव-हृदय पर निःसंशय ही विश्वास है, यह मानना पड़ेगा। अगर यह विश्वास नहीं है, तो मानना होगा कि स्टेट खतम नहीं होगी। लेकिन ऐसा विश्वास है कि एक अवस्था में स्टेट खतम ही होगी। यह एक सोचने का विषय है। कुछ लोग कहते हैं कि सत्ययुग था और उसमें शासन की जरूरत नहीं थी। उसमें शासन था भी नहीं। कुछ लोग कहते हैं, सत्ययुग कभी नहीं था। लेकिन आगे आयेगा, इसकी जरूरत है। जो मानते हैं कि भूत-काल में सत्ययुग था, वे पुराणवादी हैं। जो मानते हैं कि सत्ययुग भविष्य-काल में आयेगा, वे कम्युनिस्ट हैं। वे पुराणकार और ये कम्युनिस्ट, दोनों सत्ययुगवादी हैं। सत्ययुग हुआ, इसकी वे कल्पना करते हैं और सत्ययुग होगा, ऐसी ये कल्पना करते हैं। हम क्या कहते हैं? हम कहते हैं, भूत और भविष्य, दोनों हमारे हाथ में नहीं हैं। वर्तमान हमारे हाथ में है और हम वर्तमान में ही सत्ययुग लाने की कोशिश करते हैं, बस इतना ही फरक है। **पुराणकार भूत-सत्ययुगवादी हैं और कम्युनिस्ट भविष्य-सत्ययुगवादी हैं। सर्वोदयवाले वर्तमान सत्ययुगकारी हैं।** मैंने "वादी" नहीं कहा, "कारी" कहा। अब हमारे लिए उन दोनों का विरोध भी हो सकता है और सहानुभूति भी हो सकती है। कई जनसंघवादी हमसे मिलते हैं और कहते हैं कि तुम अहिंसा की क्या बात करते हो, यह तो कलियुग है। कलियुग में अहिंसा कैसे चलेगी? अहिंसा तो सत्ययुग में थी, ऐसा कहने वाले पुराणवादी हैं। उनका विश्वास है कि अहिंसा आज नहीं चलेगी। इस तरह ये विरोध करते हैं। ये कम्युनिस्ट भी कभी-कभी विरोध करते हैं और कहते हैं कि तुम कैसे कल्पनावादी हो? आज तो जरूरत पड़ेगी, तब हिंसा करने को तैयार होना चाहिए। आखिर अहिंसा तो रहेगी। याने आखिर की अहिंसा के लिए आज हिंसा करने की हिम्मत रखनी होगी और तुम्हें अपनी अहिंसा आज थोड़ी बाजू में रखनी होगी, ऐसा उनका कहना है। परंतु आज अगर हिंसा के लिए मन में तैयारी रखते हैं और अहिंसा के लिए भविष्य में आशा रखते हैं, तो संभव है कि अहिंसा कभी नहीं आयेगी। इस तरह कुछ विचार-भेद है।

हमारी मुश्किल

परन्तु सत्ययुग क्या है, इसकी व्याख्या में मतभेद नहीं है। आदर्श समाज क्या है और क्या होना चाहिए, इसमें भी मतभेद नहीं है। मैं छोटे-छोटे मतभेदों की बात नहीं करता। पुराणवाले स्वर्ग का जो चित्र हमारे सामने रखते हैं और ये कम्युनिस्ट स्वर्ग का जो वर्णन करते हैं, याने आगे का समाज कैसा होगा, इसका जो वर्णन वे करते हैं, उसमें कोई भेद नहीं है। हम पुराणवालों से पूछते हैं, तुम्हारा स्वर्ग हमें आकर्षक मालूम होता है, पर उसकी सीढ़ी क्या है, बताओ। वे कहते हैं, सीढ़ी है। याने मरना पड़ेगा! मरने के बाद स्वर्ग देखो। पर इसमें क्या पड़ा है? वह अत्यन्त आकर्षक होते हुए भी हम वहाँ नहीं पहुँच सकते। हम कम्युनिस्टों से पूछते हैं, तुम्हारा स्वर्ग भी अच्छा है, तो उसकी कौनसी सीढ़ी है? वे कहते हैं, आज हमें परिपूर्ण हिंसा की तैयारी रखनी होगी। एक कहता है, मरने के बाद स्वर्ग मिलेगा, दूसरा कहता है, मारने के बाद स्वर्ग मिलेगा! ऐसा हमारे लिए दोनों में मुश्किल मामला हो जाता है।

उनकी मुश्किल

अब हमारे लिए भी उनको क्या मुश्किल होती है? वे कहते हैं, तुम तो बहुत ही अच्छा उपदेश करते हो। लेकिन क्या अच्छा उपदेश करने वाले तुम ही पैदा हुए? सैकड़ों संत हुए। उनके ग्रंथ रट-रट कर वही बातें तुम बताते हो। जहाँ बुद्ध, ईसा सफल नहीं हुए, वहाँ क्या तुम कारगर साबित होगे? बाइबिल में अहिंसा की तालीम क्या कम है? दुनिया में एक हजार भाषाओं में बाइबिल का तर्जुमा हो गया है, और भी भाषाओं में तर्जुमा हो रहा है। इतनी भाषाओं में तर्जुमा हुआ है और सिपाही लोग भी मरते हैं, तो जेब में बाइबल रखते होंगे। तिस पर भी यह हिंसा होती है। भगवान् का नाम लेते हैं, इतवार के रोज बाइबिल पढ़ते हैं और छह दिन उसे भूल जाते हैं! इस हालत में तुम्हारा उपदेश क्या पराक्रम करेगा? अपने उपदेश से तुम परिवर्तन ला सकते हो क्या? अगर ला सकते हो, तो लाकर दिखाओ; लेकिन हमारा विश्वास नहीं है। याने हमारे लिए उनकी मुश्किल यह है कि हमारा विचार अच्छा होने पर भी वे उसे नहीं ले सकते।

हमें क्या करना है?

लेकिन वाद-विवाद करने से क्या होगा? हमें निश्चय करना होगा कि इस विचार में दुनिया में एक ताकत प्रगट करने की शक्ति है, तो वह ताकत प्रगट करनी होगी। पोचमपल्ली में पहले कल्पना न होते हुए भी जब वह घटना हुई, तब रात में मेरा चिंतन चला कि यह क्या घटना हुई? इसमें ईश्वर का कोई इशारा है क्या? लेकिन हमने कहा है कि ईश्वर के साथ-साथ गणित पर भी हमारा विश्वास है। तो हमने मन में गणित लगाया कि कम-से-कम पाँच करोड़ एकड़ जमीन हासिल करनी होगी, तभी यह काम होगा। यह विचार आया, तो हमारे दिल के अंदर शंका, भय पैदा होने लगा। यह मानना असंभव लगा कि आज जिस तरह से सौ एकड़ जमीन मिली है, उसी तरीके से पाँच करोड़ एकड़ भूमि मिलेगी। जब यह तर्क कुंठित होने लगा, तब हमारे सामने कम्युनिस्टों का दर्शन हुआ। उनका कुछ काम वहाँ चलता था। उसका वर्णन मैं यहाँ अभी नहीं करना चाहता, परंतु उस समय मैं सोचने लगा कि इस बात पर अगर मेरा विश्वास नहीं होता है कि प्रेम और विचार समझाने से जमीन प्राप्त होती है, तो मुझे कम्युनिस्टों पर विश्वास रखना होगा। अगर यह अहिंसा का, सर्वोदय का विचार निकम्मा है, तो मानना होगा कि कम्युनिज्म से काम बनेगा! इतने हम नजदीक-नजदीक हैं। एक वर्तुल के आखिर के दो बिन्दु नजदीक-नजदीक होते हैं। जहाँ वर्तुल समाप्त होता है, वहाँ से वह शुरू होता है। याने जो सबसे दूर है, वही सबसे नजदीक होता है। कम्युनिज्म हिंसा को मान्य करता है, परंतु वह करुणा-प्रेरित है, यह मानना होगा। बड़ी विचित्र वस्तु है! करुणा की प्रेरणा भी है, हिंसा पर विश्वास भी है। यह विसंगति आज की नहीं है, अनादि काल से चली आयी है। "गीता-प्रवचन" में हमने लिखा है कि एक जमाने का सबसे श्रेष्ठ अहिंसात्मक पुरुष जो था, उसने इक्कीस बार शस्त्र चलाया। कारुण्य-मूर्ति परशुराम में यह विसंगति थी। स्पष्ट ही विरोध है, हाथ में परशु और है कारुण्य-मूर्ति! उसके जमाने से आज तक यह विसंगति चली आयी है। हमें यह विसंगति तोड़नी है, शांति और प्रेम की शक्ति सिद्ध करनी है।

हम पर आक्षेप

आज शांति, शांति, शांति का त्रिवार जप करने वाले 'स्टेटसको' वादी होते हैं। समाज में बदल होने से वे डरते हैं। उसके उल्टे, समाज में क्रांति करने वाले लोग अहिंसा की कैद नहीं चाहते। वे हिंसावादी नहीं होते हैं, अहिंसावादी भी नहीं होते हैं, वे कारुण्यवादी होते हैं। कारुण्यवादी लोग हिंसा के लिए प्रेरित होते हैं, यह विसंगति आज की नहीं है। यह आश्चर्यकारक भी नहीं है। इतनी विसंगति वहाँ है, लेकिन वे कहते हैं, जीवन 'लॉजिक' कहाँ है? जीवन तो विसंगति से भरा है। किसके जीवन में विसंगति नहीं है? इसलिए हमें कहते हैं कि एक बार विसंगति कर डालो। अहिंसा को थोड़ा बाजू में रखो और हिंसा को कबूल करो। हिंसा अनादि है, प्राचीन काल से चलती आयी है, लेकिन अंत में अहिंसा लानी है। याने वे अनादि सांत हिंसा मानते हैं और एक बार अच्छी व्यवस्था करके जो अहिंसा शुरू होगी, तो वह अनन्त काल तक चलेगी। याने जो अहिंसा अनन्त काल तक चलेगी, वह "सादि अनन्त" होगी। बीच के काल में हम हैं। वे कहते हैं, अहिंसा पर तुम विश्वास रखो, लेकिन हाथ में औजार रखो। क्या तुम्हें गरीबों की करुणा नहीं आती? दरिद्री पिसे जाते हैं। उनके लिए थोड़ी हिंसा के लिए तैयार हो जाओ! तैयार नहीं होते हो, तो निष्क्रिय होते हो! यह आक्षेप चिंतन करने योग्य है!

शांतिवादी स्थिति-स्थापक होते हैं और क्रांतिवादी हिंसावादी होते हैं। और हम क्या करते हैं? हम क्रांतिवादी हैं और शांति से काम करना चाहते हैं। हम पर यह जिम्मेवारी है कि शांति से इस दुनिया का कोई भी मसला हल हो सकता है, यह सिद्ध करके दिखायें। यहाँ जो जमात इकट्ठी हुई है, उसकी जिम्मेवारी मैं समझा रहा हूँ। छह साल में जो दर्शन हुआ, वह यह है कि कुछ लोगों को यह शंका आने लगी है कि शायद शांति से क्रांति हो सकेगी। याने जिनके मन में यह निश्चित था कि शांति से क्रांति नहीं होगी, उनके मन में शंका आने लगी है कि शायद शांति से क्रांति होगी। हम समझते हैं, छह साल के प्रयत्न से इतना यश मिला हो, तो हमारी अपेक्षा से बाहर यश मिला है।

(सर्वोदय-संमेलन, कालड़ी, ता० १०-५ के भाषण का द्वितीयांश)

www.vinoba.in

भूदान-यज्ञ

२४ मअी सन् १९५७

लोकनागरी लिपि *

हिंदुस्तान राह दिखा सकता है

(विनोबा)

अिस समय केरल की तरफ सारी दुनिया का ध्यान है। दुनिया में यह पहला ही अवसर है, जब कि साम्यवादी पक्ष चुन कर आया है और संविधान के तौर पर काम कर रहा है! आज हम दुनिया को दिखा सकते हैं कि हमारे यहां के साम्यवादी भी दूसरे ढंग के होते हैं, क्योंकि पवित्र पेरियार नदी का पानी वे पिये हुअे लोग हैं! अिसीलिअे यहां साम्यवादियों का रंग दूसरा ही है।

यह 'कम्युनिज़्म' शब्द ही अीसाअी धर्म में से निकला है। हमने अीसाअी लोगों से कहा कि आप लोग कानून की बात क्यों करते हैं? पहले जमीन बांट लें, फिर कानून बनेगा ही। अुससे फिर यहां के राज्य-कर्ताओं को अहिंसा का पदार्थ-पाठ मिलेगा। वे विश्वास नहीं रखते कि अहिंसा से काम होगा। परंतु अगर काम हो जायगा, तो अुनका हृदय-परिवर्तन हो जायगा। आपको तो अिस समय हृदय-परिवर्तन का बड़ा मौका है। आप लोग यह दिखा दें कि कानून की जरूरत नहीं है। बिना कानून जमीन बांट ली, जमीन की मालकियत खतम हो गयी। अगर आप सब लोग अैसा काम करेंगे, तो सारे के सारे पक्ष-भेद ही खतम हो जायेंगे। सारे भारत में अेक ही पक्ष रहेगा, वह भारतीय पक्ष होगा, दूसरा कोअी पक्ष नहीं। तब तो बड़ी भारी क्रांति हासिल हो गयी! राजनैतिक क्षेत्र में भी अुससे क्रांति होगी। हमको तो अपने देश की लोकनीति स्थापित करनी है। वह है, पक्ष-मुक्त लोकनीति, जहां केवल सेवा-भावना है और जहां सत्ता है ही नहीं, सेवा ही परम देवता है, जहां लक्ष्मी, शक्ति और सरस्वती दासी के तौर पर सेवा में खड़ी हैं। अिसीलिअे जरूरी है कि पक्ष-भेद मिट जायं। अगर सब लोग ग्रामदान की बात कबूल करते हैं, स्टेट का दान हो जाता है, तो फिर अुसका बड़ा भारी परिणाम केवल हिंदुस्तान की राजनीति पर ही नहीं, परंतु दुनिया की राजनीति पर भी होगा। अिंग्लैंड ने यहां की राजनीति का मॉडल हमारे सामने रखा और कहा कि तुम लोग खूब पिछड़ गये हो। वास्तव में राजनीति में ही हिंदुस्तान आगे है। पर अुसकी योग्यता का असर सारी दुनिया पर तब होगा, जब हम ग्रामदान के जरिये पक्षमुक्त लोकनीति यहां स्थापित करेंगे।

(अलवाअी, त्रिचूर, ७-५-'५७)

* लिपि-संकेत : ि = ी ; ी = ी ; ख = ख ; संयुक्ताक्षर हलंत-चिह्न से।

ग्रामदान-आरोहण !

(विनोबा)

एक सेवक-समाज यहाँ उपस्थित है। चार-पाँच महीने हुए, भूदान के लिए जो समितियाँ हर प्रांत में थीं, उन सबको तोड़ दिया गया। इसके बाद कार्यकर्ताओं ने इस काम में मानो अपने प्राण की बाजी लगायी है। इसमें इन कार्यकर्ताओं को क्या प्राप्ति होती है? साधारण जन-समुदाय जिसे 'प्राप्ति' समझता है, क्या वह प्राप्ति इन लोगों को मिलती है? इन्हें तो जो मिलता है, वह तपस्या का आनंद ही है। कार्यकर्ताओं के मन में एक भावना होती है। जन-शक्ति और प्रेम-शक्ति से सारे देश में यह कार्य संपन्न करना है, इस वास्ते घर-बार छोड़ कर कई कार्यकर्ता जंगल-जंगल घूम रहे हैं और कुछ तो अपने परिवार को साथ लेकर घूम रहे हैं। गाँव-गाँव जाते हैं और परमेश्वर का विचार समझाते हैं। ऐसे असंख्य कार्यकर्ता देश भर में काम कर रहे हैं। उनके अलावा दूसरे लोग भी, जो इस कार्य के लिए सहानुभूति रखते हैं, एक विशेष आशा मन में रख कर यहाँ आये हैं। इस वर्ष कोई विशेष घटना अपने देश में होनी चाहिए, ऐसी अपेक्षा उन लोगों के और दूसरे कई लोगों के हृदय में है। इस तरह अपने समय के लिए उन्नत भावना जहाँ प्रकट होती है, वहाँ परमेश्वर की कृपा प्रकट होती है। जिस काल में मनुष्य समझते हैं कि हमारा कार्य परम धन्य है, उस काल में परमेश्वर अवतार लेता है। लोग राह देखते हैं कि कुछ-न-कुछ उत्तम कार्य इस साल बनेगा। इससे भी तीव्र भावना बन सकती है, जैसे भक्त की होती है। भक्त हर क्षण राह देखता है कि जो दर्शन मुझे अभी तक नहीं हुआ, वह अब इस क्षण होगा। इस तरह क्षण-क्षण के लिए और दिन-दिन के लिए जहाँ मनुष्य के हृदय में भावना होती है, वहीं परमेश्वर का अवतार होता है।

हम अपने इस आरोहण-कार्य में एक विशेष स्थान में अब आ पहुँचे हैं। आज इस समाज में कुछ-न-कुछ सेवा तो चलती है, पर निष्काम सेवा दुर्लभ हो गयी है। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद थोड़े दिन ऐसे लगा, मानो हम एक स्वप्न देख रहे हों। बहुत बड़ा जो स्वप्न था, वह पूरा हो गया। फिर गांधीजी के जाने के बाद बहुत से लोग मायूस हो गये। सूत कातते रहे, खादी का भी कुछ काम करते रहे, लेकिन मानो आशा ही लुप्त हो गयी। परंतु ईश्वर ने कुछ प्रकाश दिया और भूदान का काम हमें हासिल हुआ। यह ईश्वर का एक वरदान है, क्योंकि त्याग के लिए, निष्काम सेवा के लिए, अवसर मिला है।

गलत विचार के खंडन का अध्याय समाप्त

अब हम यशस्विता के किनारे आ पहुँचे हैं। जब से भूदान का विकास होते-होते उसका रूपान्तर ग्रामदान में हुआ, तब से सबके चित्त इसके लिए अनुकूल हो गये। इसलिए इसके आगे हमें धीर-गंभीर भाव से बर्ताव करना चाहिए। हमें विश्वास करना चाहिए कि ईश्वर एक कार्य करना चाहता है और हम उस काम के लिए निमित्त बने हैं। इसलिए इसके आगे अपने मुँह से अमृत-प्रवाह ही बहना चाहिए। हम किसीके खंडन में न पड़ें। नव-विचार-प्रवर्तन के लिए कभी-कभी खंडन की जरूरत पड़ती है, इसलिए हमने भी कई दफा गलत विचार का खंडन किया है, पर हमारा हृदय साक्षी है कि उस सारे खंडन में सिवा प्रेम के और नव-विचार की स्थापना के और कोई भावना हमारे मन में नहीं थी। लेकिन इसके आगे हमने तय किया है, वह अध्याय भी समाप्त हुआ, अब ज्यादा खंडन नहीं करेंगे।

विचार समझाने की बहुत जरूरत है और सत्य-विचार की स्थापना का ही हमारा प्रयत्न हो रहा है, परंतु असत् विचार के खंडन के लिए थोड़ा-सा खंडन करते हैं। लेकिन अब हमें विश्वास हुआ है कि ऐसे खंडन की भी अब आवश्यकता नहीं रही है। सारी दिशाएँ हमारे लिए निर्मल हो रही हैं, इसलिए अब खंडन की उपयोगिता नहीं है।

यह हमारा सौम्य सत्याग्रह का तरीका है। हम समाज पर कोई आक्रमण नहीं चाहते, सिवा विचार समझाने के। जहाँ संघटना होता है, वहाँ आक्रमण होता है। इसलिए संघटन तोड़ने से हमारे कार्यकर्ताओं को यद्यपि काफी तकलीफ होने वाली थी, फिर भी हमने वह तोड़ी, क्योंकि उसकी आवश्यकता थी और हमें आशा है कि इसके आगे सब जनता इस कार्यक्रम को उठा लेगी और जो शख्स अपने जीवन-कार्य में लगता है, याने इस कार्य में अपना जीवन देता है, वह खंडन में क्यों पड़ेगा? अब हमारा हृदय कारुण्य से भर जाना चाहिए!

(सर्वोदय-संमेलन, कालड़ी का प्रथम भाषण, पूर्वार्ध ता० ९-५-'५७)

www.vinoba.in

प्लैनिंग का आधार ग्रामदान ही हो सकता है

(विनोबा)

आज मैं मुख्यतया सेवकों के सामने कुछ बातें रखना चाहता हूँ। "सबै भूमि गोपाल की" यह विचार ऐसे ढंग से प्रकट होना चाहिए कि किसीको वह भयदायी न मालूम हो और हमें भी ऐसे रूप में इसको स्वयं ग्रहण करना चाहिए कि वह विचार अभयकारी है, भयदायी नहीं, जैसे कि सत्याग्रह का विचार अभयकारी है, भयदायी नहीं। लेकिन इन दिनों "सत्याग्रह" शब्द प्रथम-श्रवण में हो भयदायो हो गया है। उसके कारणों में मैं नहीं पड़ना चाहता, लेकिन उस कल्पना का हमें बहुत संशोधन करने की जरूरत है। करुणा कहने से किसीके मन में भय पैदा नहीं होता। प्रेम, वात्सल्य आदि नाम लेने से भय पैदा नहीं होता। स्वयं "निर्भयता" शब्द इस्तेमाल करने तक से भय पैदा नहीं होता है, सत्य शब्द के उच्चारण से भी भय पैदा नहीं होता है, परंतु "सत्याग्रह" शब्द के उच्चारण से कुछ भय जरूर पैदा होता है। तो क्या सत्य, प्रेम, करुणा आदि विश्व के लिए निरंतर जीवनदायी तत्त्वों से सत्याग्रह कोई विरोधी तत्त्व है ? या यह उनसे भिन्न प्रकार का तत्त्व है, जिससे कि मन में भय पैदा हो ? परंतु वह होता है। अतः हमें सत्याग्रह-विचार का संशोधन करना चाहिए, तभी वह विचार पराक्रमी होगा, नहीं तो उसकी ताकत क्षीण हो जायगी।

इसी तरह ग्रामदान के विचार से लोगों को भय मालूम हुआ, तो उसके माने यह हुए कि हमने उस विचार को गलत समझा और गलत समझाया भी। इस समय ग्रामदान और ग्रामदान के आधार पर ग्रामोद्योग-प्रधान रचना की कई कारणों से हिंदुस्तान को आवश्यकता है। उसमें सबसे बड़ा और एक नैमित्तिक कारण उपस्थित है, और नैमित्तिक कारण बलवान होता है। प्रार्थना हमारा नित्य कार्य, नित्य धर्म है। परंतु प्रार्थना के समय आग लग जाय, तो प्रार्थना की मनोवृत्ति मन में रख कर फौरन बाल्टी लेकर दौड़ना हमारा कर्तव्य है। उस समय बैठ कर प्रार्थना नहीं बन सकती। आग बुझाने वाली प्रार्थना ही बन सकती है, क्योंकि एक नैमित्तिक कारण उपस्थित हुआ, जो नित्य धर्म से भी अधिक बलवान है। ग्रामदान के लिए ग्रामीण योजना, ग्रामोद्योग-प्रधान योजना के लिए भी एक बलदायी नैमित्तिक कारण उपस्थित है कि आज दुनिया की स्थिति अत्यन्त डाँवाडोल है और कोई नहीं कह सकता कि कब महायुद्ध छिड़ जाय। यह काल्पनिक भय नहीं है, बल्कि दुनिया का जो चित्र आज हमारे सामने है, उसके अन्दर यह चीज पड़ी है। उसकी चिंता और चिंतन सबको करना चाहिए और उसकी उपाय-योजना होनी चाहिए।

प्लैनिंग में क्या दृष्टि हो ?

अगर लड़ाई छिड़ जाय, तो कुल की कुल पंचवर्षीय योजना गिर जायगी, असंभव होगी। इसलिए जो नेशनल प्लैनिंग करेंगे, उन पर यह जिम्मेवारी है कि अपना प्लैनिंग वे इस ढंग से करें कि दुनिया में लड़ाई शुरू हो, तो भी प्लैनिंग न सिर्फ टिका रहे, बल्कि जोर भी पाये। अगर प्लैनिंग ऐसा बनाया हो कि लड़ाई की संभावना ही नहीं है, शांति बनी रहेगी, तो कहना होगा कि हमने ठीक ढंग से और दुनिया की हालत सोच कर प्लैनिंग नहीं बनाया, बल्कि आँख मूँद कर बनाया। जाहिर है कि नेशनल प्लैनिंग आँख मूँद कर नहीं बनाया जा सकता। उस प्लैनिंग में कम-से-कम कुछ तो हिस्सा ऐसा हो, जो किसी भी हालत में मजबूत रहे और वह महत्त्व का भी हिस्सा हो। मैंने पंचवर्षीय प्लैनिंग का जो अध्ययन किया है, उससे मुझे यह भरोसा नहीं हुआ कि ऐसी दृष्टि रख कर प्लैनिंग किया हो। शायद ऐसा मानने में कुछ अन्याय भी होता हो, परंतु जो प्लैन बना है, उस पर से मैं यह कहता हूँ। उसमें यह माना है कि दुनिया में शांति रहेगी। समूचे राष्ट्र के प्लैनिंग के लिए इस तरह मानना, आज की हालत में मैं नहीं मानता कि प्लैनिंग के शास्त्र में बैठेगा। यह वस्तु ही अशास्त्रीय प्लैनिंग है। मैं प्लैनिंग पर टीका नहीं करना चाहता हूँ, सिर्फ निर्देश करना चाहता हूँ कि इस समय ग्रामदान और ग्रामीण योजना एक "डिफेन्स मेजर" है, यह सबको ध्यान में रखना चाहिए।

ग्रामदान की उत्कटता क्यों ?

आज मैं ग्रामदान के लिए इतना क्यों व्याकुल हुआ हूँ, इस पर से आपको इसका खयाल आयेगा। वैसे ग्रामदान स्थायी वस्तु और स्थायी विचार है, इसलिए आहिस्ता-आहिस्ता ही वह विकसित हो सकता है और होगा, यह मानने में मुझे कोई उज्र नहीं था ; बल्कि मैं यह भी मान सकता था कि सौ-दो सौ, पाँच सौ ग्रामदान हासिल हुए, तो अब उन्हें अच्छे बनाओ, विकसित करो और फिर दूसरे ग्रामदान हासिल करो। इस तरह गो स्लो (Go Slow) की बात भी मैं कह सकता था, क्योंकि यह मूलभूत विचार है और मूलभूत विचार यदि आहिस्ता-आहिस्ता फैलता है, तो उसमें दोष नहीं है। परंतु आप देखते हैं कि इस विचार के लिए इस समय मैं जरा उतावला हुआ हूँ। पर उतावला होकर कुछ का कुछ कर डालेंगे या बोगस ग्रामदान हासिल करेंगे, तो हम खत्म हो जायेंगे। इसलिए हमें वैसा नहीं करना चाहिए। परंतु मेरे मन में इतनी अधीरता क्यों आयी है, इसका कारण यह है कि अगर यह काम हम जल्दी करते हैं, तो सब तरह से बच जाते हैं और यदि जल्दी नहीं करते हैं, तो हम अपना काम कर ही नहीं पायेंगे। उसकी हमें उतनी चिंता नहीं है, परंतु उससे देश का ही कुल प्लैनिंग गिरेगा—चाहे वह दोषयुक्त प्लैनिंग हो या गुण-युक्त प्लैनिंग। प्लैनिंग गिरेगा, तो सरकार की प्रतिष्ठा गिरेगी। 'इसमें हमारा क्या जाता है', इस तरह नहीं सोचना चाहिए, क्योंकि उससे हमारी भी प्रतिष्ठा गिरेगी, देश की भी प्रतिष्ठा गिरेगी। ग्रामदान जल्दी न हो, तो भूदान-आंदोलन वेग से नहीं बढ़ेगा, जमीन बाँटने वगैरह में देर लगेगी, इसकी मुझे उतनी चिंता नहीं है। मैं तो यह भी कहता हूँ कि ग्रामदान बढ़ेंगे, तो हमें उसकी कोई चिंता नहीं करनी चाहिए, बल्कि जितने ज्यादा वे बढ़ेंगे, उतना हमारे सिर का भार ही उतरेगा, यह कहने के पीछे एक बड़ी भूमिका है कि मेरे सामने लड़ाई का चित्र खड़ा है। मैं किसीको भयभीत नहीं करना चाहता, न खुद भयभीत होना चाहता हूँ, बल्कि लड़ाई छिड़ जाय, तो हमें अधिक धैर्य-संपन्न और सावधान होना चाहिए, इसीकी बात मैं कह रहा हूँ।

नेशनल प्लैनिंग के लिए खतरे

गांधियन प्लैनिंग के खयाल से ग्रामदान पर और ग्रामोद्योगप्रधान योजना पर जोर देना लाजमी है, परंतु अभी उस बात को भी मैं छोड़ देता हूँ। नेशनल प्लैनिंग और देश को बचाने के खयाल से, याने युद्ध के समय उसका परिणाम अपने देश पर कम हो, देहात तो कम-से-कम बच जायँ, शहर भी कुछ बच जाँय, तो अच्छा ही है, इस खयाल से मैं कह रहा हूँ कि गाँव-गाँव में दो साल का अनाज रहना चाहिए, नहीं तो गाँव के लोगों पर अनाज खरीदने का मौका यदि आयेगा, तो लड़ाई के समय वे मारे जायेंगे। गाँव में दो साल का अनाज तभी रहेगा, जब गाँव के लोग एक होकर योजना करेंगे और इस तरह की ग्राम-योजना वे तभी कर सकेंगे, जब ग्रामदान होगा ! जब तक गाँव में आज की हालत रहेगी, याने जमीन की निजी मालकियत बनी रहेगी, कुछ लोग मालिक और कुछ लोग बेजमीन रहेंगे, तब तक गाँव के लोगों का एक दिल नहीं बनता और एक दिल न हो, तो ग्राम-योजना नहीं बनती। ग्राम-योजना के बिना ग्राम स्वावलंबी नहीं हो सकते और ग्रामदान के बिना ग्राम-योजना नहीं हो सकती। इसलिए ग्रामदान आवश्यक है। एक **डिफेन्स मेजर** के तौर पर मैं इसकी आवश्यकता बता रहा हूँ। गांधियन प्लैनिंग के विचार की कैद मैं अपने लिए नहीं रखना चाहता हूँ, न दूसरों के लिए रखना चाहता हूँ। उसे हम अलग रखें। परंतु अपने देश की आजादी, देश के ग्रामीणों की उन्नति और देश की सुरक्षा के लिए ग्रामदान बहुत जरूरी है।

सरकारी प्लैनिंग ग्रामदान के सिद्धान्त पर ही खड़ा होना चाहिए। मैं तो यहाँ तक बोलने का साहस कर सकता हूँ, सोचने का साहस कर सकता हूँ और सोचने के बाद बोलने का भी, कि इसमें थोड़ा-सा कोअर्शन (दबाव) का अंश आ जाय, तो भी हर्ज नहीं। अहिंसा के खयाल से बोलने वाला जब यह कहता है, तो वह बहुत खतरनाक माना जायगा, परंतु देश के बचाव की बात जब आती है, तब कुछ-न-कुछ कोअर्शन होता ही है। सरकार हुक्म करती है और लोगों को उसे मानना पड़ता है। मान लीजिये कि कल सरकार यह कहे कि लश्कर में जाना लाजमी है, तो हमारे जैसे कुछ निष्ठावानों को, चाहे वह दया से छोड़ भी दे, तो भी दूसरों को लश्कर में जाना पड़ेगा। याने खतरे के समय हम सरकार के हाथ में जीवन दे ही देते हैं। जहाँ डिफेन्स का सवाल आता है, वहाँ कुछ थोड़ा 'कोअर्शन' आता ही है। वह 'कोअर्शन' इस प्रकार का नहीं होता कि उसका प्रतिकार करने की वृत्ति लोगों में आ जाय। जहाँ लोगों के ध्यान में यह बात आ जायगी कि सरकार ग्रामदान को बहुत चाहती है और उसके बिना देश का रक्षण असंभव समझती है और इसीलिए सरकारी तौर पर उसमें थोड़ा 'कोअर्शन' का अंश आ जाय, तो उसे मानने के लिए मेरा मन तैयार है।

www.vinoba.in

लोगों की एवं सरकार की मर्यादाएँ

मैं नहीं जानता कि मैंने अपना विचार आपके सामने ठीक तरह से रखा है या नहीं। "यह शख्स 'लीगल कोअर्शन' के लिए या हिंसक दबाव के लिए तैयार हो गया है," इस तरह का भाव आपने ग्रहण किया, तो उसका मतलब यह हुआ कि मैंने आपको ठीक से विचार नहीं समझाया, या आप उसे समझ नहीं सके। परंतु इससे ज्यादा स्पष्ट मैं नहीं समझा सकता। मेरे मन में यह बात स्पष्ट है कि जहाँ देश का प्लैनिंग होता है, वहाँ किसी न किसी प्रकार 'लीगल कोअर्शन' आता ही है, सरकारी योजना में वह होता ही है और देश को बड़ी हिंसा से बचाना है तो कुछ मात्रा में थोड़ा-सा 'कोअर्शन' आयेगा। ग्रामदान की हवा बनने के बाद अगर सरकार कानून बना दे कि हर गाँव का ग्रामदान होना चाहिए, तो उसमें कुछ थोड़ा दबाव आ ही जायगा। परंतु ऐसे दबाव को भी मान्य करने की वृत्ति में मैं आ गया हूँ। इसलिए कि आज उसे मैं "डिफेन्स मेजर" के तौर पर आवश्यक समझता हूँ। मैं नहीं चाहता कि आप जनता में जाकर ऐसा प्रचार करें कि सरकार दबाव डाल कर ग्रामदान करे, इसकी कोशिश की जाय। मैं भी लोगों को इस तरह समझाने वाला नहीं हूँ। लेकिन लोगों से मैं यही कहने वाला हूँ कि तुम स्वयं ग्रामदान दो, ग्राम-योजना करो, अपने पाँव पर खड़े रहने का निश्चय करो और सरकार को बचाओ। इस तरह दोनों एक दूसरे को बचा सकते हैं।

(लोकसेवक-शिविर, सर्वोदयनगर, कालड़ी, ता० १२-५-'५७ के भाषण का—प्रथमांश)

तंत्रमुक्ति की क्रांतिकारी संभावनाएँ

(विनोबा)

हमने जो तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति कर डाली है, उसमें एक शक्ति है और एक अशक्ति भी है। याने उससे दुर्बलता भी पैदा हो सकती है, अगर हम विचार को ठीक से नहीं समझेंगे। इससे तो एकदम बल महसूस होना चाहिए कि "वह तंत्र और निधि सब कट गया, अब मैं मुक्त हो गया, मेरा बल बढ़ा, अब मैं आत्मा के आधार पर आ गया। ईश्वर के सामने सीधा खड़ा हो गया हूँ, जनता पर निर्भर हो गया हूँ, अब मैं जनता में घुल-मिल जाऊँगा। यह बड़ी शक्ति मुझमें आयी है, जो पहले मेरे पास नहीं थी।" इस तरह शक्ति का अनुभव आना चाहिए। इसका परिणाम क्या होगा? हमने एक छोटी चीज की है, परंतु वही बड़ी चीज भी है। छोटी चीज इसलिए कि हम लोग छोटे हैं और बड़ी चीज इसलिए कि उसमें से एक भारत-व्यापी ताकत पैदा हो सकती है। याने तंत्र-मुक्ति और निधि-मुक्ति से यह हो सकता है कि हजारों कार्यकर्ता शक्तिशाली बनें, अत्यन्त नम्र बनें। वे जनता से घुलमिल गये, जनता पर उनका नैतिक असर बढ़ रहा है, उनकी अपनी नैतिक उन्नति हो रही है, आदि ऐसा दर्शन होगा, तो भिन्न-भिन्न राजनैतिक पक्षों के जो तंत्र खड़े किये गये हैं, वे कुल-के-कुल तोड़ने में हम मददगार हो सकते हैं। हमारी आँखों के सामने ऐसा चित्र है। वे सोचेंगे कि भूदान के लोगों ने अब तंत्र और निधि को तोड़ दिया है, वे जनता-मय हो गये हैं, जब वे बोलते हैं, तो जनता आवाज देती है! शुकदेव घर छोड़ कर निकले, तो उनके पिता व्यासदेव व्याकुल होकर उनके पीछे गये और पूछने लगे कि हे पुत्र, तू कहाँ जा रहा है? शुकदेव ने जवाब नहीं दिया, तो कवि लिखता है कि शुक के साथ तन्मय हुए वृक्षों ने जवाब दिया कि "तेरा पुत्र शुक संन्यास ले रहा है, परित्याग कर रहा है।" हमारे सेवक ऐसे सर्व-भूत-हृदय हो गये, तो उनकी तरफ से जनता भी उत्तर देती जायगी!

इस हालत में फिर पी० एस० पी० वाले सोचेंगे कि 'हम यह क्या कर रहे हैं? ऐसा संगठन, जिससे कि फूट ही पड़ती है, दो के चार टुकड़े बनते हैं, चार के आठ और आठ के सोलह, यही पराक्रम उससे हो सकता है, तो ऐसा संगठन हम क्यों रखें?' कांग्रेसवाले सोचेंगे कि इतना सारा भारभूत तंत्र हमने खड़ा किया है, जो अपने ही बोझ से दब रहा है और जिसमें शुद्धि रखना और जिसकी हानियाँ टालना मुश्किल मालूम हो रहा है, तो उसको हम क्यों रखें? उसको क्यों न तोड़ दिया जाय? गांधीजी पर पूरी श्रद्धा होते हुए भी उन्होंने उस संस्था को कायम रखा। लेकिन वे देखेंगे कि अब खतरा नहीं और भूदान के सेवक लोगों में पहुँच कर घुल-मिल जाते हैं और उनमें नैतिक भावना पैदा करते हैं, इस तरह हमारे सेवकों के बर्ताव का कुछ दर्शन हो, तो भिन्न-भिन्न पक्ष सोच सकते हैं कि हमारा तंत्र कायम रखना ठीक नहीं है। तंत्र को तोड़ कर नारायण-शरण होना, जनता में पहुँचना और सब एक होकर समान कार्यक्रम को उठाना ठीक है। अगर हम अपने-अपने अलग-अलग ढोल पीटते हुए जनता में जायेंगे, तो जनता हम सबको उड़ा देगी। इस तरह एक सर्वसामान्य कार्यक्रम लेकर ही सब जनता में जायेंगे। यह बहुत दूर की बात है या नजदीक की, हम नहीं जानते। यह हो सकता है, यह बात मैं सेवकों से निवेदन करना चाहता हूँ। यह ठीक है कि तंत्रमुक्ति, निधिमुक्ति से चंद लोगों को कुछ तकलीफ होती होगी, लेकिन हम उस पर ध्यान न दें और उसके पीछे क्या दृष्टि और कितनी शक्ति है, इसका चिंतन करें, तो हम "पायोनियर" बन सकते हैं, जिसे वेद में अग्रणी कहा गया है "**अग्रणी त्वा अग्निः**"। उस जमाने में लोग जहाँ रहने के लिए जाते थे, वहाँ पहले आग लगाते थे, जिससे कि जंगल कट जाते थे और फिर वे वहाँ बसते थे। इसलिए अग्नि को अग्रणी या अग्रेसर कहा है। इस तरह यह छोटी-सी जमात अग्रणी, अगनि साबित हो सकती है, जो विचारों के जंजाल बने हैं, जो सारा 'कनफ्यूजन' है, उसे तोड़ने वाले साबित हो सकते हैं, ऐसी हम आशा करते हैं। फिर ये सारे राजनैतिक पक्ष सोचेंगे कि हम अपने तंत्र को तोड़ें और एकरूप बनें। यह बन सकता है और इसके लिए यह अपना जो तंत्रमुक्ति का और निधि-मुक्ति का साधन है, उससे; और ग्रामदान का विचार जो सबको कबूल है, इन दोनों को मिलाकर आगे कुछ सूरत बन सकती है।

जब हम आगे की सूरत की बात करते हैं, और आगे क्या परिणाम होगा यह बताते हैं, तो इसमें एक खतरा भी होता है कि लोगों में फल-वासना पैदा होती है। वे सोचने लगते हैं कि बाबा ने बताया कि यह परिणाम होगा, तो वह कब होगा? जहाँ हम दूर की चीज का दर्शन कराते हैं, तो उसके लिए लोगों के मन में वासना पैदा होती है। वे दिन गिनने लगते हैं कि यह कब होगा? गीता ने कहा है, "**संगं त्यक्त्वा**"—संग को छोड़ कर काम करो। शंकराचार्य ने इस पर भाष्य लिखा है कि "**मोक्षमपि फल इति**"—मोक्ष की भी आसक्ति छोड़ कर काम करो। सिद्धि और असिद्धि को समान समझो। सिद्धि याने ईश्वर की कृपा। भक्त को अधिक से अधिक यही चिंता रहती है कि ईश्वर की कृपा कब होगी, ईश्वर-प्रसाद कब मिलेगा। लेकिन उसकी भी चिंता छोड़ कर काम करना चाहिए। वे कहते हैं कि जहाँ तुम साधना से प्रेरित होकर काम करते हो, वहाँ उसके परिणामस्वरूप ईश्वर की कृपा होने ही वाली है, जिसे सिद्धि कहते हैं। लेकिन वह कब होगी, उसकी चिंता छोड़ कर काम करो, इस तरह शांकर-भाष्य में कहा गया है। आज हम कालड़ी में बैठे हैं, इसलिए स्वाभाविक ही शांकर-भाष्य का स्मरण होता है। हम जब आगे की बात करते हैं, तो उसके साथ फल-वासना न रखने की भी बात कहते हैं। इसीलिए सब तंत्र टूट जाय, ऐसी आशा रखने के लिए हमने नहीं कहा, बल्कि यह सब इसलिए कहा कि हमने जो कदम उठाया है, उसके अंदर जो गर्भित शक्ति है, उसका आपको भान करायें।

(लोकसेवक-शिविर, सर्वोदयनगर, कालड़ी, ता० १२-५ के भाषण का द्वितीयांश)

केरल में विचारों का समन्वय हो

प्राकृतिक संयम-गुण की महिमा व्यक्ति को समझा कर यहाँ के शास्त्रज्ञ संतुष्ट नहीं हुए, बल्कि उसके साथ-साथ उन्होंने समाज-रचना भी ऐसी की कि जिससे व्यक्ति को मदद मिले। भारत में इन दोनों विचारों का मेल करने की कोशिश की गयी है। इस प्रकार के प्रयत्न को 'स्मृति' कहते हैं और जो सिद्धांत व्यक्ति की शुद्धि चाहता है, उसको कहते हैं—'श्रुति'। समाज की व्यवस्था के साथ मेल बैठाने वाली हैं स्मृति। अब प्राचीन काल से ये दोनों विचार साथ-साथ चलते आ रहे हैं। उनका एक अखंड प्रवाह है। सर्वोदय में इन दोनों का मेल है। यह हमारा गुण नहीं है। भारतीय संस्कृति का लाभ हमें मिल रहा है। इसीलिए हमको आशा है कि केरल में दोनों पक्ष सर्वोदय स्थापन करने का प्रयत्न करेंगे। याने हमें आशा है कि सब धर्म-विचारक सर्वोदय को मान्य करेंगे। यह होने में समय तो जरूर लगेगा, क्योंकि दोनों में आपस-आपस में अविश्वास पैदा हुआ है। लेकिन यह होगा, ऐसा विश्वास है। इस पर आप चिंतन-मनन करें। यह केरल की कीमिया है। यहाँ के शंकराचार्य समन्वयाचार्य कहे गये। उन्होंने कुल काम समन्वय के लिए किया है। हम आज केरल में दो विचारों का समन्वय चाहते हैं—समाज में व्यक्ति का महत्त्व और व्यक्तिगत शुद्धि का महत्त्व है।

(नैयाट्टिनकरा, त्रिवेंद्रम, १९-४)

—विनोबा

---

www.vinoba.in

भारतीय संस्कृति की देन

(उ. न. ढेबर)

काँग्रेस ने तो भूदान के बारे में अपनी राय बहुत साफ शब्दों में रख दी है। काँग्रेस समझती है कि भूदान-आंदोलन में हर एक काँग्रेसमैन को पूरी तौर से सहयोग देना ही चाहिए। जहाँ तक ग्रामदान का सवाल है, यह भूदान-यज्ञ की एक विकसित प्रवृत्ति ही है। थोड़े दिन पहले पंडितजी ने जो कुछ कहा, वह आप सबने देखा होगा। ग्रामदान की प्रवृत्ति में वे बहुत-सी शक्यताएँ पाते हैं। मुझे इस बारे में कोई शक नहीं है कि जितना जोर काँग्रेस ने और काँग्रेसमैन ने भूदान-प्रवृत्ति पर दिया है, उतना ही जोर और हो सकेगा, तो उससे भी ज्यादा जोर ग्रामदान की प्रवृत्ति पर वे लोग लगायेंगे। लेकिन कल जब विनोबाजी बोल रहे थे, तब मैं सोच रहा था कि विनोबाजी एक के बाद दूसरा कदम उठा कर देश को जहाँ ले जा रहे हैं, उसे हम लोग पूरी तरह से समझते हैं या नहीं! उन्होंने कहा कि ग्रामदान का मतलब इतना ही नहीं है कि हम गाँव में जमीन का दान करें। ग्रामदान के अन्तर्गत श्रमदान भी आ जाता है और सब प्रकार के दान उसमें आ जाते हैं। पर हम लोग ग्रामदान लेने के लिए जायँ, इसके पहले हमारे पास जो कुछ है, वह देने को भी हम तैयार हों।

थोड़े दिन पहले हमारे बीच पश्चिम के एक लेखक आये थे। उन्होंने एक किताब लिखी है कि दुनिया में कुदरत का कुछ ऐसा इन्तजाम है कि एक-एक जाति और एक-एक कौम के लिए एक विशेष कार्य ही ईश्वर ने सौंपा है। अगर हम बीच का इतिहास देखें, तो यहाँ की प्रजा में सौंदर्य और कला की पूजा का विशिष्ट गुण है। अंग्रेजों का इतिहास देखें, तो लोक-शासन के लिए वहाँ की जनता ने कुछ तपस्या की। रोम में न्याय-शास्त्र का विकास हुआ। अमेरिका में टेक्नालाजी आगे बढ़ रही है। हमारे देश में भी एक विशिष्ट तत्त्व है, जिसकी हमने आराधना की। हिन्दुस्तान की संस्कृति की नींव है यज्ञ-दान-तप। हिन्दुस्तान के सामाजिक और आर्थिक इतिहास की यह नींव है। उस देन को हम किस तरह मूर्तिमन्त करें, वह सोचने के लिए हम सर्वोदय-सम्मेलन में आते हैं। पिछले सौ साल का इतिहास देखें, तो हमारे नेतृत्व की परंपरा ने—रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, लोकमान्य तिलक से गांधीजी तक सभी ने—इसी चीज पर जोर दिया है। यह कोई आकस्मिक संयोग नहीं है। इसी तरह हमारे बीच में पंडितजी का और विनोबाजी का होना भी कोई आकस्मिक संयोग नहीं है।

जनता इस चीज को पकड़ने के लिए तैयार है। परंतु बीच की कड़ी जितनी कमजोर होगी, उतनी पकड़ भी कमजोर होगी। हम जितने कमजोर होंगे, उतना ही विनोबाजी का काम कमजोर होगा।

मालकियत आखिर एक राग की निशानी है। हम दूसरे से यह आशा रखते हैं कि वह आदमी अपना राग छोड़ देगा। मुझे विश्वास है कि हम पहले खुद ही अपने अन्दर का राग-द्वेष छोड़ने की कोशिश करेंगे। दूसरी बात हमें यह समझनी है कि आज जिस प्रकार की दुनिया है, उसमें हमको यज्ञ-दान और तप का प्रयोग करना है। हममें जो सबसे खराब दोष है, वह यह है कि हम अपने ही विचार के बारे में आग्रह रखते हैं और परस्पर की बात समझने के लिए तैयार नहीं होते। जो आदमी दूसरे का विचार समझने के लिए तैयार न हो, वह आदमी दूसरे का विश्वास नहीं पाता। जो आदमी दूसरे से प्रेम करने को तैयार नहीं है, वह भी दूसरे का प्रेम नहीं पाता है।

हम सब लोग एक-दूसरे की विशिष्ट भूमिका समझ कर एक नयी समाज रचना का प्रयोग करने के लिए यहाँ इकट्ठे होते हैं। प्रयोगशाला में हमेशा खुली चर्चा होनी चाहिए और सबको दिमाग खुला रखना चाहिए।

(सर्वोदय-सम्मेलन, सर्वोदयनगर, कालड़ी में किया भाषण, ता० ९–५)

…जिस तरह माता जीवन पर्यंत अपने एकमात्र पुत्र की देखरेख करती है, उसी तरह हमें संसार के छोटे-बड़े सब जीवों के लिए अपने हृदय और बुद्धि को विशाल बना कर द्वेष और दुर्भावना की संकीर्णता का अतिक्रमण करके प्रेम का व्यवहार करना चाहिए।

—राधाकृष्णन् सर्वपल्ली

भूमि-समस्या का हल कानून से संभव नहीं

(वी० आर० कृष्ण अय्यर)

यहाँ पर हिंदुस्तान के विभिन्न प्रदेशों से आये हुए भाई-बहनों को मैं प्रणाम करता हूँ। मैं भूदान-आंदोलन के संदेश मानने वालों में हूँ और इसीलिए मैं इस कार्य में शरीक हुआ था। आज भी मैं यहाँ आया हूँ, तो इस कार्य में सहयोग देने की इच्छा से ही। लेकिन मैं यहाँ के एक व्यक्ति की ही हैसियत से नहीं आया हूँ, बल्कि केरल सरकार के प्रतिनिधि की हैसियत से आया हूँ और हमारे राज्य के मुख्य मंत्री का संदेश लेकर आया हूँ।

इस संमेलन की सफलता, केरल की जनता और सरकार के लिए एक महत्त्वपूर्ण वस्तु है, क्योंकि हम केरल के प्रश्नों को हल करने के काम में लगे हैं और उन प्रश्नों को हल करने में इस संमेलन के निर्णय सहायक होंगे, ऐसा हमारा विश्वास है। मैं समझता हूँ कि इस संमेलन से केरल प्रदेश और यहाँ की जनता धन्य हो गयी है।

आज विनोबाजी ने जो कहा, उसे मैं कभी भूल नहीं सकता। उन्होंने कहा कि केरल की भूमि-समस्या हल करने में हम कामयाब हुए, तो हिंदुस्तान की समस्या को हल करने का मार्ग हमें मिलेगा। उन्होंने यह आशा प्रकट की कि केरल पहला प्रदेश है, जहाँ जनता और सरकार के सहयोग से भूमि-समस्या हल होगी। भूदान के कार्यकर्ता आज जनमानस में परिवर्तन लाने का काम कर रहे हैं। इस तरह का परिवर्तन होने पर लोगों का सहयोग प्राप्त होगा। लोग स्वेच्छा से अपनी जमीन की मालकियत छोड़ने के लिए तैयार हो जायेंगे, तभी वास्तव में भूमि-समस्या हल होगी। इस आंदोलन के जरिये यह कार्य संपन्न होगा, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है। एक व्यक्ति की हैसियत से मैं अपने विचार रख रहा हूँ। जब तक लोग स्वेच्छा से यह कार्य करने के लिए तैयार नहीं हो जायेंगे और हवा, पानी के समान जमीन भी सबकी नहीं बनेगी, तब तक देश में शांति स्थापित नहीं होगी। उसके लिए मनुष्य के मन में ही परिवर्तन लाना होगा। जन-मानस तैयार हो जाने पर फिर कानून आयेगा और यह काम पूरा होगा।

केरल में या हिंदुस्तान में ही नहीं, बल्कि समस्त एशिया में सबसे बड़ा मसला जमीन का है। भूदान-यज्ञ के जरिये मनुष्यों के बीच प्रेम और सहयोग की भावना पैदा करने का हमारा जो प्रयत्न चल रहा है, उसमें जब तक सफलता प्राप्त नहीं होगी, तब तक हम इस प्रश्न को हल नहीं कर सकेंगे। इसलिए भूदान-यज्ञ के जरिये ही हमें यह समस्या हल करनी होगी। मुझे इस विचार ने बड़ी प्रेरणा दी है।

हमारी जनता किस तरह से अपना जीवन बिताये, वह किस तरह आगे बढ़े, किस तरह अपनी माँगों की पूर्ति करे, इन सब पर सोचते हुए मुझे लगता है कि भूदान-आंदोलन के जरिये ही हम विचार-प्रचार कर सकते हैं। इसीलिए मैं इसकी ओर आकर्षित हुआ हूँ।

कानून असमर्थ है

जमीन का मसला कानून के जरिये हल होगा, ऐसी मुझे उम्मीद नहीं है। जैसे हवा-पानी है, वैसे ही जमीन पर सबका अधिकार है, यह भावना मनुष्य में पैदा होनी चाहिए। मनुष्य में आध्यात्मिक शक्ति का विकास होना चाहिए, जो भूदान-यज्ञ से हो रहा है। इससे कानून के लिए अनुकूल वातावरण पैदा होता है। इसीलिए मैं कहता हूँ कि इस आंदोलन के प्रचार के कारण जनता का और जमींदारों का हृदय-परिवर्तन हो रहा है और जमीन सारे समाज की है, इस सिद्धांत को लोग अब मानने लगे हैं। केरल में दक्षिण से लेकर उत्तर तक, कन्याकुमारी से लेकर कासरगाडे तक यह संदेश फैल जाय, तो फिर सरकार के लिए कानून बनाने में कोई मुश्किल नहीं रहेगी। फिर केरल सारे हिंदुस्तान का नेतृत्व करेगा। मैं तथा मेरे अन्य मित्र चाहते हैं कि पूज्य विनोबाजी की इस पदयात्रा के द्वारा केरल में जमीन का मसला हल करने के लिए आवश्यक हवा का संचार हो। भूमि की मालकियत गलत है, इस विचार का प्रचार इस आंदोलन के जरिये होगा, तो फिर हम आगे का काम कानून के जरिये बिलकुल आसानी से कर सकेंगे। भूदान-आंदोलन के जरिये विचार-प्रचार और कानून ये दोनों साथ-साथ चलेंगे तो केरल समस्त भारत के लिए एक नमूना पेश करेगा।

यहाँ पर जो सर्वोदय-संमेलन हो रहा है, उसके द्वारा विश्वशांति का आवाहन किया जायगा। आज दुनिया में लड़ाई का आतंक फैला हुआ है। दुनिया बिलकुल परेशान है। उस हालत में अद्वैत के आचार्य शंकर की कालड़ी से विश्व को शांति का संदेश मिले, ऐसा कार्य यहाँ हो। इसमें हमारी सरकार सब तरह का सहयोग देने के लिए तैयार है। मैं फिर से अपनी सरकार की ओर से आप सबको प्रणाम करता हूँ।†

† केरल राज्य के विधि-मंत्री वी०आर० कृष्ण अय्यर का सम्मेलन में हुआ भाषण, ता० १०-५

www.vinoba.in

ग्रामदान का लक्ष्य

(विनोबा)

ग्रामदान का अर्थ क्या है? लोग समझते हैं कि ग्रामदान याने समान विभाजन, पर ग्रामदान याने साम्ययोग है। साम्ययोग कब बनता है? समझने की जरूरत है कि जिस साम्ययोग में कारुण्य का उत्कर्ष नहीं दिखता, वह साम्ययोग नहीं है। इन दिनों हम कठोरहृदय होकर समत्व की भावना नहीं रख सकते। हृदय में द्वेष भरा रहता है, हम समत्व की भाषा बोलते हैं और मानते हैं कि समत्व कठोर उपाय से होगा। वैषम्य की स्थापना करने के लिए जरूर कठोर साधन चाहिए, परंतु साम्ययोग की सिद्धि के लिए कारुण्य का ही उत्कर्ष होना चाहिए। जब कारुण्य का उत्कर्ष होता है, तभी मनुष्य अपना सब कुछ अर्पण करता है। बहुत से कार्यकर्ता सवाल पूछते हैं कि क्या ग्रामदान में सब लोग दान देते हैं? लेकिन कुछ ग्रामदान ऐसे होते हैं, जहाँ चन्द लोग दान नहीं देते हैं, हम वहाँ क्या करेंगे? तो वहाँ हमारी करुणा प्रकट होनी चाहिए और उन लोगों को, वे पूर्ण रूप से सुरक्षित हैं, ऐसा भास हमारे काम से होना चाहिए। हम उन्हें आश्वासन दे सकते हैं कि भाइयो, आज हमें जीवन मिल रहा है। आपको हम तकलीफ नहीं देना चाहते। यह कार्य हम करुणा से प्रेरित होकर करना चाहते हैं। हम गरीबों को तकलीफ नहीं देना चाहते। हमारे मन में उनके लिए करुणा है और हमें इस बात की भी करुणा आती है कि हमारे अमीरों का जीवन बर्बाद हो रहा है। हम चाहते हैं कि अमीर गरीब के साथ मिल कर काम करें। अगर वे ऐसा करेंगे, तो उनका जीवन धन्य होगा, आत्म-सम्मान बढ़ेगा और उनके आनन्द की वृद्धि होगी, स्नेह हासिल होगा। आज वह नहीं है। इसलिए उनके लिए हमारे हृदय में करुणा है, नफरत नहीं है। उनको भय होता है कि उनके जीवन का स्तर एकाएक गिर जायगा, अगर वे इसमें शामिल होते हैं। उसकी जितनी चिंता उनको होती है, उससे ज्यादा हमें होनी चाहिए, इसलिए उन्हें आश्वासन मिलना चाहिए। हम कहें कि आप समूह में आइये, आपकी रक्षा पूरे समूह में होगी। ग्रामदान का अर्थ ही है, सबका एकरूप होना। इसका अर्थ इतना ही नहीं है कि जमीन के मालिकों को जमीन देनी है और गरीबों को वह लेनी है। देने वाले के लिए तो धर्म हो गया, लेकिन लेने वालों के लिए क्या है? समझने की जरूरत है कि जो धर्म होता है, वह सर्वजनीय होता है, सबके लिए होता है। सत्य-रूप धर्म चंद लोगों को लागू होता है और चंद लोगों को नहीं होता, ऐसा नहीं है। प्रेम की जिम्मेवारी सब पर है। लेकिन हम सोचते हैं कि देने की जिम्मेवारी देने वाले पर है। अगर इतनी ही बात हम समझते हैं, तो हम धर्म को नहीं समझे। जो दूसरे लोग हैं, उनके पास भी देने की चीज है। उनके पास श्रम-शक्ति है। वह शक्ति वे दे भी रहे हैं। लेकिन अपने छोटे परिवार के लिए दे रहे हैं। इसलिए उन्हें समझाना है कि ग्रामदान होगा, तब तुम्हारा श्रमदान होगा। जमीन के मालिकों का जमीन का दान, श्रमवालों के श्रम का दान और बुद्धिवालों की बुद्धि का दान होगा। सबका सब अर्पण होगा, तब ग्रामदान होगा। ग्रामदान का यह पूरा अर्थ है। इसमें हरेक को अपने हृदय की परीक्षा करनी होगी। इसमें कठोरता के लिए स्थान ही नहीं है। केवल प्रेम का काम है।

यह जो ग्रामदान का दर्शन है, उसको समझ कर कार्यकर्ताओं को कारुण्य भक्ति से काम करना है। अपने देश में भिन्न-भिन्न पक्ष हैं। हम नहीं समझते कि ग्रामदान की इष्टानिष्ठता के बारे में उन पक्षों में मतभेद है। सबके सब सहमत हैं कि ग्रामदान होना चाहिए। इस हालत में जो लोग सेवा करेंगे, उनका हमें स्वागत करना चाहिए। हमें इसके आगे अपना रूप एक विशेष प्रकार का रखना चाहिए।

> जो निष्काम सेवक होते हैं, वे अपने लिए श्रेय नहीं चाहते। इतना ही नहीं, वे दूसरे को श्रेय देना चाहते हैं। श्रेय की इच्छा रखने वाला सकाम सेवक सामने आता है, तो निष्काम सेवक उसे मदद करता है, उसीको श्रेय देता है, उसीको आगे करता है और स्वयं उसके पीछे रहता है। नाम उसका होने देता है। अपना नाम न होने में उसे आनंद होता है। इस तरह दूसरे को वह अग्रसर बनाता है। इसी तरह हमें काम करना है। यह बात कार्यकर्ताओं के लिए है।

इस काम के परिणामस्वरूप हम ऐसा वातावरण नहीं बना सके, जिससे कि चुनाव में अच्छी भावना निर्माण हो—यह नहीं हुआ, इसलिए समझना चाहिए कि उसकी जिम्मेवारी हम पर आती है। समाज में जो दोष होते हैं, उसकी जिम्मेवारी निष्काम सेवा करने वालों पर आती है। जाति-भेद प्रगट हुआ। हिंसा की भावना प्रगट हुई। यह सब प्रगट हुआ सो ठीक ही हुआ, अप्रगट रहता, तो दुख बढ़ता। पर हमें आत्म-परीक्षण भी करना चाहिए। हमने कहा था कि यंत्र में घर्षण होता है। चुनाव में भी घर्षण होता है। लेकिन हमारे जैसे कार्यकर्ता समाज में काम करते हैं, तो परिणाम 'स्नेहन' में होना चाहिए। वैसा नहीं हुआ, तो समझना चाहिए कि भूदान और ग्रामदान का आंदोलन ऊपर-ऊपर के स्तर पर रहा, हृदय की गहराई में नहीं गया। एक बात आँखों के सामने स्पष्ट हो गयी। ग्रामदान का संकल्प जाति-भेद, पक्ष-भेद और व्यक्ति-भेद को तोड़ सकता है, परंतु यह तोड़ने में ग्रामदान का संकल्प समर्थ नहीं हुआ। याने जाति-भेद, पक्षभेद, व्यक्ति-भेद बलवान हुआ। फिर वहाँ के ग्रामदान के संकल्प के क्या माने हैं? वह संकल्प कच्चा था, सच्चा नहीं था। वह संकल्प हृदय में उत्पन्न नहीं हुआ था। उसके पीछे कारुण्य की प्रेरणा नहीं थी। तब से हमारे मन में यह बात स्पष्ट हो गयी कि जिस ग्रामदान में कारुण्य प्रेरणा नहीं होगी, वह ग्रामदान सफल नहीं होगा। ग्रामदान से दूसरे-तीसरे लाभ भी होते हैं, उनकी आशा से भी ग्रामदान होता है। वह भी अच्छा कार्य है। परंतु वह समर्थ ग्रामदान नहीं होगा, अगर उसमें कारुण्य नहीं होगा और अगर उसने जाति-भेद को नहीं तोड़ा। हमें ग्रामदान में ऐसी शक्ति निर्माण करनी है, जो इन सब भेदों को तोड़ेगी। इस वास्ते लोगों को धैर्य से समझाना चाहिए।

कुछ महीने पहले नानाभाई दवे यहाँ आये थे। वे सणोसरा में शिक्षण का काम करते हैं और गांधीजी के विचार पर श्रद्धा रखते हैं। उन्होंने सारा जीवन शिक्षण-कार्य में बिताया है। इस समय वे बता रहे थे कि गांधीजी के विचार के अनुसार संस्था चलाने में कितनी दिक्कत होती है और ऊपर वालों से कितनी बाधाएँ आती हैं। इस पर हमने पूछा कि आप क्या उपाय सोचते हैं? उस अनुभवी ने जो उत्तर दिया, वह मैं आपके सामने रखता हूँ। उन्होंने कहा कि "इसके आगे दस-पंद्रह साल संस्थाएँ चलाने के लोभ में हमें नहीं पड़ना चाहिए, बल्कि सतत घूमते हुए ही लोगों को विचार समझाना चाहिए।" यह विचार हमें पहले से ही मान्य था, पर उनके जैसे स्थिर सेवक के मुँह से जब हम यह सुनते हैं, तो हमें बल मिलता है।

हमने बहुत बार कहा है कि जिन्हें नया विचार सूझता है, वे एक जगह बैठ नहीं सकते। कौनसा विचार नया है और कौनसा पुराना है, उसकी भी कसौटी होती है। जो विचार नया होता है, वह मनुष्य को घुमाता है। उसे बैठने नहीं देता। ईसा ने नया विचार दिया। वह शिष्य को समझाया। वह बैठ नहीं सका। सतत परिव्रज्या की। बुद्ध, महावीर ने भी शिष्यों को विचार समझाया, परन्तु वे बैठ नहीं सके, सतत घूमते रहे। सैकड़ों साल वे लोग घूमे। शंकर और रामानुज के जमाने में भी यही हुआ। जो पुराने विचार में पड़े हैं, वे एक जगह बैठे रहते हैं। जो नया विचारक होता है और जो क्रांतिकारी होता है, वह चंक्रमण करता है। वह स्थिर नहीं बैठ सकता। संस्कृत की यह 'चर' धातु अद्भुत ही है। विचार और संचार, दोनों एक-दूसरे के साथ जुड़े हैं। हम सब लोगों का भाग्य है कि हमें अब घूमते ही रहना है।

देश के कोने-कोने में, गाँव-गाँव में, जंगल-जंगल में हमें पहुँचना चाहिए। अपने देश के कोने-कोने में कोई खबर नहीं पहुँचती है, यह देख कर हमें बड़ा उत्साह आता है। उत्साह इसलिए आता है कि हमें घूमने का मौका मिलता है। हम जायेंगे और लोगों को खबर देंगे तभी उन्हें बात मालूम होगी। गहन और गूढ़ देश में प्रचार करने का भाग्य हमें मिला है। यह कार्य हमें सतत जारी रखना होगा, एक-एक स्थिर जगह में दो-दो प्रचारक होने चाहिए। आसपास के गाँव में जो हवा फैल रही है, उसके बीच एक गाँव "एयर कंडिशण्ड" नहीं रख सकते और यह भी नहीं होना चाहिए कि सेवक उस गाँव में नाम मात्र को बैठा रहे और ज्यादा समय बाहर घूमे। इसलिए होना यह चाहिए कि ऐसे स्थान में दो-दो मनुष्य रहे, एक तो स्थान में बैठा रहे और विचार प्रचार के लिये घूमता रहे, लोक-स्थिति का निरीक्षण करता रहे, लोगों को मदद पहुँचाता रहे। जो स्थिर कार्य होगा, उसका भी एक प्रयोजन है जो उस स्थान में बैठा रहेगा, वह स्थान के लोगों की सेवा करेगा।

हमारे कार्यकर्ताओं को अपने पाँव मजबूत रखने चाहिए। रामचंद्रजी चौदह साल घूमे थे। हम उनके नम्र भक्त हैं। इसलिए हमें समझ-बूझ कर हमारा जीवन परिव्रज्या के लिए समर्पण करना चाहिए।

(सर्वोदय-संमेलन, कालड़ी का प्रथम दिन का भाषण, उत्तरार्ध ता० ९–५–५७)

www.vinoba.in

सर्वोदय-संमेलन, कालड़ी की सहयात्रा

(लक्ष्मीनारायण भारतीय)

आद्य आचार्य शंकर की पावन-प्रेरक अद्वैत-भूमि कालड़ी में, सर्वोदय के आचार्य शंकर (धर्माधिकारी) की संकेतपूर्ण अध्यक्षता में और गौतम-शंकराचार्य-गांधी के समन्वय-प्रतीक विनोबा के नेतृत्व में नौवाँ सर्वोदय-संमेलन प्रेरक और उत्साह भरे वातावरण में संपन्न हुआ। पर इस उत्साह का उत्कर्ष तो तब प्रकट हुआ, जब लोक-सेवक-शिविर का संचालन अध्यक्षा आशादीदी से छीन कर वरुण देवता ने अपने हाथ में ले लिया। कवियों-गायकों को पावस-भूगान और पावस-नृत्य की प्रेरणा ऐसे समय हुई हो, तो आश्चर्य नहीं, पर जब सृष्टि के साथ, पावस-स्नात होकर, विनोबा स्वयं दुखायल कवि के "सब भूमि गोपाल की—नहीं किसीकी मालिकी" के गान में समरस होकर झूमने-नाचने लगे, तब वह स्वर्गीय दृश्य देख कर तो आँखें अघाती ही नहीं थीं! मानो सामवेद का उनका आवाहन इस रूप में अवतीर्ण होकर ही उन्हें प्रेरणा दे रहा था। "नहीं किसीकी मालिकी और सब भूमि गोपाल की" का जो आनंद हम इस तरह लूट रहे हैं, उसमें अब सभी को शामिल करने का क्षण आ पहुँचा है। इस काम के प्रति, ग्रामदान के कारण, सहानुभूति की प्याली लबालब भर चुकी है। उसको लेकर लोगों के हृदय में प्रवेश करना अब हमारा काम है। वह यदि हम नहीं करते हैं, तो हम ही असफल माने जायेंगे, आंदोलन नहीं; क्योंकि वह तो सफल होने ही वाला है!"—इन उद्गारों को, विदर्भ के सेवकों के सामने तुरंत बाद में प्रकट करके उन्होंने अपनी और सेवकों की इस आनंद-अभिव्यक्ति का विश्लेषण भी कर दिया।

प्रस्तुत आंदोलन एक ऐतिहासिक क्षण में हो रहा था, इसकी निदर्शक परिस्थितियाँ अनेक तरह से सामने आ चुकी थीं। इसीलिए जागतिक और राष्ट्रीय, स्फोटक एवं उग्र परिस्थितियों के कारण विनोबा को कहना पड़ा कि "इस काम की जल्दी मुझे क्यों हो रही है, इसे आप समझ लीजिये। यह काम आहिस्ते-आहिस्ते हो, तो कुछ बिगड़ता नहीं, परंतु विश्वशांति की आकांक्षा अब इसी मार्ग से, सर्वोदय के प्रकर्ष से सिद्ध हो सकती है और उसका क्षण आ पहुँचा है।" अतः सन् '५७ के प्रति लोगों की जगी हुई आकांक्षाएँ 'सत् आवन' के रूप में ही प्रकट होकर पराक्रम करे और सेवक-गण ग्रामदान की मशाल लेकर उनका मार्गदर्शन करें, इसकी तीव्र आवश्यकता इस संमेलन ने प्रकट कर दी है!

ऐसी गंभीर पार्श्वभूमि में ता० ९ मई की मंगल प्रभात में शंकर कॉलेज के विशाल प्रांगण में संमेलन शुरू हुआ। प्रकृति ने ही मानो इतना ऊँचा, करीब ३०-३५ फीट, मंच संमेलन के लिए तैयार रखा था। वहाँ पहले एक टेकड़ी का खंडहर-सा था। बुलडोज़र से साफ़ करा कर कॉलेज वालों ने उसका मैदान बना लिया था। उसमें ३५-४० हज़ार लोग तो सहज ही बैठ सकते थे और १५ से २० हज़ार के करीब लोग तो थे ही। दस हजार के करीब सेवक ही थे। शेष स्थानीय एवं प्रांतीय दर्शक व दर्शनेच्छु!

एक मधुर मलयालम भजन द्वारा संमेलन की कार्यवाही प्रारंभ हुई। फिर सर्व-सेवा-संघ के सहमंत्री एवं सर्वोदय-संमेलन के मंत्री श्री वल्लभस्वामी ने अध्यक्ष-पद के लिए श्रद्धेय दादा धर्माधिकारी का आवाहन किया और दादा के अग्रजवत् श्री भाई धोत्रेजी को परिचय कराने के लिए प्रार्थना की। भाई ने बड़े भाई का नाता निभा कर संक्षेप में, परंतु मधुर शब्दों में दादा का परिचय दिया, जिसमें एक संयोग की ओर उन्होंने सबका ध्यान आकृष्ट किया कि "डॉ० कुर्तकोटी शंकराचार्य ने अपने पीठ के उत्तराधिकारी-पद के लिए दादा का चुनाव किया था!" शंकराचार्य की भूमि में होने वाले इस संमेलन की अध्यक्षता शांकर-पीठ के लायक व्यक्ति द्वारा ग्रहण हो, यह बड़ा संकेतपूर्ण संयोग था। वस्तुतः दादा इसके लिए कतई तैयार नहीं थे, इसलिए हरेक को उनकी स्वीकृति से और सर्व-सेवा-संघ की इस सूझ से, अत्यधिक आनंद हुआ!

दादा द्वारा अध्यक्ष-स्थान ग्रहण करने के बाद केरल की महान् भूमि की ओर से श्री केलप्पनजी ने, जो गांधी-युग के अनन्य कार्यकर्ता और मंदिर-प्रवेश आंदोलनों के नेता रहे हैं, सबका स्वागत किया। 'वायकम' सत्याग्रह के समय विनोबाजी का जो मार्गदर्शन उस जमाने में मिला था, उसकी अनुभूति उन्होंने मधुर शब्दों में प्रकट करते हुए केरल की निसर्ग-सिद्ध मधुरवाणी और शुद्ध हृदय स्वागतार्थ प्रस्तुत कर दिये! सबके हृदय भर आये, जब उन्होंने अपने को पूर्ण अर्पित ही कर दिया! संमेलन के प्रारंभ में ही यह श्रीगणेश बड़ा प्रेरक रहा।

स्वागत-भाषण के बाद विनोबाजी का भाषण प्रारंभ हुआ। शंकराचार्य का स्मरण सबकी ओर से इस अवसर पर हो रहा था। विनोबा का संबंध शंकराचार्य के साथ गुरु-शिष्य का है। स्वभावतः वह प्रेरणा एवं स्मरण उनके भाषण में प्रतिबिंबित हो रहे थे। साथ ही गांधीजी का स्मरण उन्हें इस क्षण अधिकाधिक हो रहा था और हृदय भर-भर आता था! बोधगया में भगवान् बुद्ध के स्मरण में समन्वय का संदेश उन्होंने प्रकट किया, तो यहाँ शंकर की भूमि में अद्वैत का संदेश नवरूप में उपस्थित किया। बोधगया से कालड़ी तक की यह यात्रा बड़ी प्रेरक और महत्त्वपूर्ण रही है, इसमें शक नहीं। 'समत्व' के रूप में अद्वैत का आदर्श प्रकट हो और उसके साथ 'करुणा' का उत्कट दर्शन हो, यही इस यात्रा का संदेश है। 'साम्ययोग' और 'करुणा' का यह सामंजस्य बुद्ध और शंकर का ही सामंजस्य है। लेकिन 'इस सद्विचार की स्थापना के साथ अब असद्विचार के खंडन की जरूरत नहीं, वह अध्याय समाप्त हो चुका। सारी दिशाएँ निर्मल हो चुकीं, सब तरफ से अनुकूल हवाएँ बह रही हैं, यशस्विता के किनारे हम पहुँच चुके हैं, यह भावना भी उन्होंने अपने भाषण में प्रकट की जो बड़ी संकेतपूर्ण है। ग्रामदान और उसका व्यापक दर्शन, इस पर जहाँ सभी एकमत हो गये हैं, वहाँ उसी समान विचार को हाथ में लेकर उस सहानुभूति का उपयोग कर लेना एवं मतभेद की बातें अलग रखना कितना जरूरी है, यही संकेत उन्हें देना था। विनोबाजी के भाषण के बाद प्रथम दिन की कार्यवाही मौन प्रार्थना के द्वारा समाप्त हुई। इन दिनों सार्वजनिक प्रार्थना इसी रूप में होती है। पाँच मिनिट की उस मौन प्रार्थना में सत्य-अहिंसा-करुणा आदि गुणों का व्यापक चिंतन हो, ऐसा विनोबा का संकेत मिलता है और पाँच मिनिट ऐसी अद्भुत शांति फैल जाती है कि जिसका दर्शन आज किसी भी समारोह में असंभव हो गया है। महान् विचार और महान् व्यक्तित्व के साथ समूह और समूह-शक्ति की एकात्मता एवं आवाहन का यह प्रयोग नैतिक आंदोलनों के लिए कितना प्रेरक और शक्तिशाली होता है, इसकी अनुभूति ऐसे समय हुए बगैर नहीं रहती!

दूसरे दिन सुबह संमेलन की कार्यवाही फिर शुरू हुई। प्रांत-प्रांत से आये हुए नेता-कार्यकर्ता अपने अनुभव सुनायें, अपनी दिक्कतें प्रस्तुत करें, अपनी अनुभूतियाँ प्रतिबिंबित करें और देश में आंदोलन की क्या प्रगति है, इसका निदर्शन करें, यह प्रयोजन इन भाषणों का होता है। जहाँ बाबा राघवदासजी ने १८५७ के स्मृति दिन का पावन स्मरण कराते हुए नये रूप में नये आवाहन में १९५७ की भावना प्रकट की, वहाँ तमिलनाड के अनन्य सेवक जगन्नाथन्, मध्यप्रदेश के बोंबटकर आदि कार्यकर्ताओं ने अपने-अपने यहाँ की भावनाएँ एवं उत्साह का दिग्दर्शन भी कराया। उनके बाद काँग्रेस के अध्यक्ष श्री ढेबरभाई का भाषण हुआ, जिसमें उन्होंने यज्ञ-दान-तप की भारतीय संस्कृति की विशेषता का विश्लेषण करते हुए ग्रामदान-आंदोलन में काँग्रेस के संपूर्ण योग की आकांक्षा प्रकट की।

फिर सर्व-सेवा-संघ के सहमंत्री श्री सिद्धराजजी ढड्ढा ने सर्व-सेवा-संघ का ऐतिहासिक प्रस्ताव निवेदन के रूप में पढ़ कर सुनाया, जो इसी अंक के प्रथम पृष्ठ पर है। वस्तुतः यह प्रस्ताव ऐतिहासिक इसलिए भी है कि इसने भूदान-आंदोलन के नये मोड़ की ओर ध्यान खींच कर सारे देश का आवाहन उसी तरह खींचा, जैसे सेवापुरी-संमेलन ने भूदान-आंदोलन को सामूहिक रूप दिया था। अब ५ करोड़ की भाषा से हम बहुत आगे बढ़ गये हैं। उस वक्त या इन आँकड़ों में एक मर्यादा बँध गयी थी। ५ करोड़ एकड़ प्राप्त करके भी भूमि का निजी स्वामित्व हटता ही, ऐसी बात नहीं, परंतु अब तो ग्रामदान के रूप में निजी स्वामित्व ही हटाने का आवाहन हुआ है। कोई क्रांति न बँधी हुई लीक पर चलती है, न आँकड़ों में! वातावरण ही मुख्य चीज़ होती है और किस प्रकार तेजी से हवा बदल गयी है, यही हम देख रहे हैं! अब सारा ध्यान भूमि के निजी स्वामित्व के विसर्जन पर केंद्रित करना है और संयोग से सारे देश का इसे नैतिक समर्थन प्राप्त है, जब कि भूदान पर कुछ-न-कुछ आक्षेप बने ही रहे। परंतु ग्रामदान ने तो क्या कम्युनिस्टों को और क्या काँग्रेसवालों को, क्या समाजवादियों को और क्या धर्मवालों को, सबको खींच लिया है और सब इसकी अंतर-भावना स्वीकार कर रहे हैं। प्रस्ताव ने इसी ओर इंगित करके देश को इस आंदोलन में भाग लेने का आवाहन किया, तो दूसरी ओर सारी शक्ति इसके लिए लगाने की प्रेरणा सेवकों को दी। जिस प्रकार सेवापुरी-संमेलन का संकल्प ऐतिहासिक था, उसी प्रकार यह है।

www.vinoba.in

सन् '५७ की क्रांति का यही रूप है, यही प्रेरणा है, यही आवाहन है। आरोहण की प्रगति का भी यही क्रांत-दर्शन है।

प्रस्ताव पर श्री जयप्रकाशजी ने तो अपना हृदय ही खोल कर रख दिया! "किसी भी आंदोलन में जो नहीं देखा, वह यहाँ देखा कि कहाँ से कहाँ यह कितनी अल्पावधि में चला गया", इसके प्रति अपनी भावना प्रकट करते हुए उन्होंने ५ करोड़ के संकल्प की ग्रामदान के संकल्प से तुलना की और इस आरोहण के लिए सारे देश का आवाहन किया। उनका यह आवाहन तब अधिक भावनापूरित हो उठा, जब उन्होंने अपने पुराने साथी श्री नंबूद्रीपादजी को भी इस 'सहमति' के कार्यक्रम पर एकत्र काम करने का आवाहन किया। श्री नंबूद्रीपाद साम्यवादी हैं, तो जयप्रकाशजी समाजवादी! दोनों पक्षों का आपसी संघर्ष जाहिर ही है। लेकिन सर्वोदय ने दोनों को समान स्नेह की भूमिका पर लाकर खड़ा कर दिया है। दो खेमे के लोग जब सहृदयता की पूँजी साथ में लेकर एक ही मंच पर आते हैं, तो बीच की दीवारें गिर जाती हैं। श्री जयप्रकाशजी ने अपने आवाहन में, मानो अपने खेमेवालों का भी प्रतिनिधित्व किया, तो श्री नंबूद्रीपादजी ने भी श्री नवबाबू के द्वारा अपनी हार्द-भावना भेजी।

जयप्रकाशजी के भाषण में एक दर्द था, जो सब सेवकों को आत्मनिरीक्षण के लिए प्रेरित किये बिना नहीं रह सकता! '५७ का यह प्रस्ताव-रूपी संकल्प, सारे देश की ओर से, राष्ट्रीय स्तर पर इस क्षण नहीं हो सका, हमारी शक्ति कम पड़ी, यही वह दर्द था! विनोबा ने बाद के अपने भाषण में, "भले ही यह राष्ट्रीय संकल्प न हो, विश्व-संकल्प ही है," कह कर जो विश्लेषण किया, वह एक विशिष्ट दर्शन ही था। एक ओर, "हम भ्रम में न रहें, अभी हमें बहुत बड़ी मंजिल तय करनी है और तपस्या के शिखर तक पहुँचना है," यह श्री जयप्रकाशजी को सूचित करना था, तो दूसरी ओर विनोबा को, "इस सूचन को बल पहुँचाने एवं तपस्या को पराक्रमी बनाने के लिए महासंकल्प एवं आत्मविश्वास का बल" पहुँचाना था। इन दो दीप-स्तंभों के प्रकाश में सेवकों को आगामी मार्ग आक्रमण करना है। इसीलिए श्री जयप्रकाशजी ने सेवकों को कहा कि "अब '५७ तक ही अपने को मर्यादित न रखें। यह तो जीवन का ही मिशन बन जाना चाहिए, अब काल-मर्यादा की बात इन वर्षों के अनुभवों से समाप्त हो जाती है! यह आरोहण है, इसमें चढ़ना ही चढ़ना है! सत्तावन तक ही चढ़ना है, आगे नहीं, ऐसी बात नहीं।" बड़ा महत्त्वपूर्ण संकेत रहा यह!

अध्यक्ष महोदय का भाषण भी इस समय अनेक संकेतों को प्रकट करने वाला साबित हुआ। जिस तेजी से हम अपने साध्य की ओर बढ़ रहे हैं, साधन का भी उतना ही ध्यान रखना आज विश्व के लिए कितना अवश्यंभावी है, यह जहाँ उन्होंने विश्लेषणपूर्वक प्रकट किया, वहाँ क्रांति की प्रेरणा, पुरुषार्थ की प्रेरणा "मानवता" ही हो सकती है, इस युगतत्त्व को भी स्पष्ट किया। परंतु यदि हम बाद के संघर्ष में पड़ कर "हिंसा या अहिंसावादी ही बन कर सोचेंगे, तो काम बनने वाला नहीं है, अतः जनता के नाते, नागरिक के नाते ही हमें पुरुषार्थ करना है," इसे स्पष्ट करते हुए उन्होंने भूदान का मर्म, पंढरपुर के विनोबा को मिली हुई ईंट के रूप में व्यक्त करके प्रकट किया।

इस संमेलन में केरल के मुख्य मंत्री श्री नंबूद्रीपाद नहीं आ सके थे, क्योंकि अपेक्षा से ज्यादा असेम्बली का अधिवेशन बढ़ गया था। इसलिए उन्होंने विनोबाजी को एक पत्र लिख कर क्षमा-याचना की और अपने विधि-मंत्री श्री वी. आर. कृष्ण अय्यर को प्रतिनिधि के तौर पर भेजा। इसके पूर्व उड़ीसा के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री नवकृष्ण चौधरी एवं नारायण देसाई उनसे मिल आये थे। उन्होंने काफी बातें कीं। ग्रामदान के काम में पूरी सहायता देने का आश्वासन उन्होंने दिया और दादा-जयप्रकाशजी-विनोबा, तीनों के लिए संदेश भेजा। फिर उनकी ओर से विधि-मंत्री श्री कृष्ण अय्यर ने भी अपने भाषण में सरकार की मदद का आश्वासन दिया और ग्रामदान की महत्ता स्वीकार की। यहाँ तक कि "कानून से भूमि-समस्या का हल संभव नहीं," यह भी उन्हें कहना पड़ा। उनके बाद प्रजासमाजवादी पक्ष के श्री पट्टम थाणु पिल्लै ने भी अपने पक्ष की ओर से सहयोग की आकांक्षा प्रकट की एवं केरल की विशिष्ट स्थिति की ओर ध्यान खींचा।

अंत में विनोबा का भाषण हुआ। विनोबा ही इस आंदोलन की प्रेरक शक्ति हैं, अतः इस भाषण की ओर सबका ध्यान लगना स्वाभाविक था, बल्कि पहले दिन के भाषण के बाद तो इस भाषण की लोग अधिक उत्कटता से प्रतीक्षा कर रहे थे।

प्रेरणा और स्फूर्ति का संदेश लेकर यह भाषण उपस्थित हुआ एवं विश्वशांति की अमली राह किस प्रकार प्राप्त हो सकती है, इसका विवेचन उन्होंने किया। खास कर 'कम्युनिस्ट', 'पुराणवादी' और सर्वोदयवालों का जो मार्मिक विश्लेषण उन्होंने किया, वह अपने ढंग का अनोखा था। सर्वोदय की मूल बात को कायम रख कर कम्युनिस्टों को जितना नजदीक लाया जा सकता है, उन्होंने लाने की कोशश की है। "ध्येय शासनहीन समाज का, प्रेरणा भी कारुण्य की, लेकिन मार्ग तो हिंसा का", यह कितनी बड़ी विसंगति है, इसका विश्लेषण करते हुए उन्होंने सर्वोदय का सर्वग्राही स्वरूप सामने रख दिया।

विश्वशांति और अणुबम-परीक्षण, विज्ञान एवं आत्मज्ञान का संयोग, समूह की इच्छाशक्ति को कार्य रूप में लाने का आवाहन आदि प्रश्नों पर विवेचन करते हुए उन्होंने बताया कि किस तरह यह संकल्प विश्व-संकल्प है। सर्वोदयवालों की ओर से अणुबम-परीक्षण का स्पष्ट निषेध नहीं हुआ है, ऐसा किसी कोने में सुनायी देता था। निस्संदिग्ध रूप में उन्होंने समस्त सर्वोदयवालों की ओर से इन परीक्षणों के प्रति तीव्र निषेध प्रकट किया और विश्वशांति की अमली राह ग्रामदान में किस तरह निहित है, यह स्पष्ट किया।

किसी कार्य के आरंभ में गणपति की कृपा-सिद्धि जरूरी होती है। " सबकी पूर्ण सहानुभूति एवं सहकार की आकांक्षा के रूप में यह गणपति की कृपा प्राप्त हो गयी है। अब सहानुभूति से भरा हुआ यह पात्र चलते-चलते जरा भी उछलता है और एक बूँद भी गिरती है, तो वह दोष हमारा है, इसकी ओर सेवकों का ध्यान खींचते हुए उन्होंने कार्यकर्ताओं को "आपसी स्नेह-भाव, कार्य-सातत्य एवं ज्ञानचर्चा" की त्रिवेणी में अवगाहन कराया और फिर सामूहिक मौन-प्रार्थना द्वारा सम्मेलन की समाप्ति हुई।

(शेष आगामी अंक में)

इस अंक के संबंध में--

पिछले "भूदान-यज्ञ" में हमने प्रकाशित किया था कि सर्वोदय-संमेलन के कारण ता० १७ का अंक बंद रहेगा। स्वभावतया पाठक यह आशा करेंगे कि ता० २४ के अंक में संमेलन की सामग्री हो। तदनुसार इस अंक की सारी सामग्री संमेलन-संबंधी ही है।

ता० २४ के अंक का याने इस अंक का मैटर प्रेस में ता० १७-१८ को दे देना होता है जब कि इसे लेते-करते ही ता० १४ बीत चुकी थी। अतः संमेलन के व अन्य स्थान से ही यह सामग्री काशी डाक से भेजनी पड़ी। इसीलिए यह अंक साधारण अंक ही निकाला गया है। ता० ३१ का अंक २४ पृष्ठों का निकाल कर उसमें संमेलन की सारी सामग्री हम दे सकेंगे। यदि कुछ रह भी जाय, तो वह अगले अंकों में पूरी कर दी जायगी।

संमेलन के सारे भाषण पूर्ण रूप से "भूदान-यज्ञ" में देना संभव नहीं था। अतः कुछ भाषणों को संक्षेप करना पड़ा है। पाठकों को सुविधा हो, इसलिए वे भाषण भी दो-दो, तीन-तीन अंशों में दोनों अंकों में अलग शीर्षकों से दिये गये हैं, एवं दिये जायेंगे। लेखों के अन्त में वैसा उल्लेख भी कर दिया गया है।

संमेलन की सारी सामग्री, बिना संक्षेप किये, पूर्ण रूप से पाठकों को प्राप्त हो, इसलिए संमेलन की रिपोर्ट भी अलग से, पुस्तकाकार सर्व-सेवा-संघ द्वारा शीघ्र ही प्रकाशित होगी।

—संपादक

विषय-सूची

विषय	वक्ता	ता०, भाषणांश	पृष्ठ
सन् सत्तावन के लिए सर्वोदय-संमेलन, कालड़ी का आवाहन	प्रस्ताव	—	१
लोकतंत्र में सत्याग्रह का स्थान	विनोबा	१२ अंतिम अंश	२
भूदान-यज्ञ का अवतार-कार्य	दादा धर्माधिकारी	१० प्रथमांश	३
शांति और क्रांति का समन्वयकारी सर्वोदय	विनोबा	१० द्वितीयांश	४
हिंदुस्तान राह दिखा सकता है	,,	७	६
ग्रामदान-आरोहण!	,,	९ पूर्वार्ध	६
प्लैनिंग का आधार ग्रामदान ही हो सकता है	,,	१२ प्रथमांश	७
तंत्रमुक्ति की क्रांतिकारी संभावनाएँ	,,	१२ द्वितीयांश	७
भारतीय संस्कृति की देन	उ. न. ढेबर	९	९
भूमि-समस्या का हल कानून से संभव नहीं	वी. आर. कृष्ण अय्यर	१०	९
ग्रामदान का लक्ष्य	विनोबा	९ उत्तरार्ध	१०
सर्वोदय-संमेलन, कालड़ी की सहयात्रा	लक्ष्मीनारायण भारतीय		११

सिद्धराज ढड्ढा, सहमंत्री, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस वाराणसी में मुद्रित और प्रकाशित। पता : राजघाट, काशी

www.vinoba.in